राजभाषा भारती

अंक : 100, वर्ष : 25 जनवरी-मार्च, 2003

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली

नई दिल्ली के विज्ञान भवन में सम्मेलन में उपस्थित प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए उप प्रधानमंत्री श्री लाल कृष्ण आडवाणी।

गुवाहाटी में आयोजित क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन में गुवाहाटी रिफाइनरी के महाप्रबंधक श्री जे.पी. गुहाराय को शील्ड से सम्मानित करते हुए राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के संयुक्त सचिव श्री मदन लाल गुप्ता। उनके साथ खड़े हैं निदेशक (का0) श्री ए.एस. गोदरे।

राजभाषा भारती

वर्ष : 25
अंक : 100
(जनवरी—मार्च, 2003)

❑ संपादक (पदेन)
कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव
निदेशक (अनुसंधान)
फोन : 24619521

❑ उप संपादक
सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा
फोन : 24698054

विषय-सूची

लेख का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.
❑ संपादकीय		(i)-(ii)
→ प्रवासी भारतीय सम्मेलन—माननीय उप प्रधानमंत्री श्री लाल कृष्ण आडवाणी		1-3
→ आज की शिक्षा और मानवीय मूल्य	—डॉ० जी.डी. सुहाने "शैलेन्द्र"	4-7
→ विलक्षण और वैज्ञानिक हिंदी की अविराम बीहड़ यात्रा	—राजीव उनियाल	8-11
→ ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप में हिंदी की उपयुक्तता	—विश्वम्भर प्रसाद 'गुप्त-बंधु'	12-16
→ उत्पादकता में हिंदी का महत्व	—डॉ० आलोक कुमार रस्तोगी	17-18
→ सूनी हुई मधुशाला	—कुलदीप कुमार	19-21
→ गांधी और मार्क्स की छाप थी 'सुमन' की रचनाओं में	—सुषमा रानी	22-23
→ उर्दू की उपेक्षा नहीं संरक्षण	—डॉ० भागीरथ भार्गव	24-26
→ गुर्दे की असाध्य बीमारियों से रोकथाम	—डॉ० शाम सुन्दर	27-29
→ उच्च रक्तचाप	—डा० के० के० अग्रवाल	30-31

निशुल्क वितरण के लिए

पत्र व्यवहार का पता :

संपादक
राजभाषा भारती
राजभाषा विभाग
गृह मंत्रालय
दूसरा तल, लोकनायक भवन
नई दिल्ली-110003

विषय-सूची

लेख का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.
→ ध्वनि प्रदूषण : समस्या एवं समाधान	—राजीव कुमार सिंह, —उपेन्द्र नाथ राय, —शरद कुमार श्रीवास्तव	32–39
→ द्विभाषिक सॉफ्टवेयरों में अनुकूलन क्षमता	—डॉ० राजेश्वर गंगवार	40–43
→ पृथ्वी की उत्पत्ति कैसे हुई ?	—डॉ० विजय कुमार उपाध्याय	44–46
❑ राजभाषा संबंधी गतिविधियां		47–54
❑ आदेश-अनुदेश		55–62
❑ स्मृति: —डॉ० हरिवंश राय 'बच्चन' —डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन'		63–64

विशेष : पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त किए गए विचार एवं दृष्टिकोण संबन्धित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

729 HA/03—1B

संपादकीय

राजभाषा विभाग की त्रैमासिक पत्रिका **'राजभाषा भारती'** का यह अंक अपने पाठकों को समर्पित करते हुए हमें अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है । विभाग का सर्वदा यह प्रयास रहा है कि इस पत्रिका के माध्यम से अपने पाठकों को अद्यतन और अर्वाचीन विषयों से संबंधित लेखों के बारे में जानकारी देकर उनका ज्ञानवर्धन किया जाए । इसी परिप्रेक्ष्य में राजभाषा भारती के वर्तमान अंक में विभिन्न विधाओं से संबंधित लेखों का समावेश किया गया है ।

पिछले दिनों नई दिल्ली में प्रवासी भारतीय सम्मेलन का आयोजन हुआ । इस सम्मेलन में बहुत बड़ी संख्या में प्रवासी भारतीयों ने भाग लिया । उप प्रधानमंत्री श्री लाल कृष्ण आडवाणी ने भी सम्मेलन में आए प्रवासी भारतीयों को संबोधित किया । उनके भाषण के कुछ अंश पत्रिका में प्रकाशित किए जा रहे हैं । श्री आडवाणी ने अपने उद्बोधन में भारत को एक वटवृक्ष की संज्ञा दी और कहा कि इस वटवृक्ष की शाखाएं विश्व के लगभग सभी देशों में फैली हुई हैं । उन्होंने कहा कि भारत विश्व पटल पर एक सशक्त, आत्मविश्वास से परिपूर्ण और प्रगति के मार्ग पर अग्रसर राष्ट्र के रूप में उभरा है । प्रवासी भारतीयों की भी सफलता के शिखर पर पहुंचने में समर्थ समुदाय के रूप में छवि बनी है, जिसने विविध क्षेत्रों में उच्च सफलताएं हासिल की हैं, जिसकी पूरी दुनिया में चर्चा है । श्री आडवाणी ने उनका आह्वान किया कि वे भारत की चहुंमुखी प्रगति में अपना योगदान दें और इसे गौरवशाली बनाए रखें ।

'आज की शिक्षा और मानवीय मूल्य' में लेखक का मानना है कि आज की शिक्षा मानवीय मूल्यों को छोड़ती जा रही है और शिक्षा का ढांचा भौतिक धरातल का होकर रह गया है । 'विलक्षण और वैज्ञानिक हिंदी की अविराम बीहड़ यात्रा' में लेखक ने हिंदी की विशेषताओं का बखूबी निरूपण किया है ।

'ज्ञान विज्ञान की भाषा के रूप में हिंदी की उपयुक्तता', 'उत्पादकता में हिंदी का महत्व' लेखों में यह निरूपित किया गया है कि आज के परिप्रेक्ष्य में ज्ञान-विज्ञान के सभी विषयों को बड़ी आसानी से हिंदी में लिखा जा सकता है । सुप्रसिद्ध

साहित्यकार डा० हरिवंशराय बच्चन और प्रख्यात साहित्यकार तथा आलोचक डा० शिवमंगल सिंह 'सुमन' अब नहीं रहे । उनकी याद में राजभाषा भारती के इस अंक में क्रमश: दो लेख 'सूनी हुई मधुशाला' और 'गांधी और मार्क्स की छाप सुमन की रचनाओं में' सम्मिलित किए गए हैं । अंक में संकलित अन्य लेख अत्यधिक सूचनाप्रद और ज्ञानवर्धक हैं, जिनसे निश्चित ही हमारे पाठक लाभान्वित होंगे ।

नई दिल्ली और गुवाहाटी में संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलनों संबंधी विवरण तथा अन्य कार्यालयों/विभागों/नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों आदि में समय-समय पर आयोजित राजभाषा संबंधी गतिविधियों का समावेश भी इस अंक में किया गया है ।

प्रवासी भारतीय सम्मेलन में
माननीय उप-प्रधानमंत्री श्री लाल कृष्ण आडवाणी का आरंभिक भाषण

10 जनवरी, 2003

कल इस सम्मेलन का शुभारंभ **भारत रत्न** से सम्मानित दो महान कलाकारों के शहनाई और सितार वादन से हुआ। संभवत: इस जुगलबंदी से बेहतर इस सम्मेलन का शुभारंभ हो ही नहीं सकता था। एक समा सा बंध गया था और तालियों की गड़गड़ाहट के बीच श्रोता स्वयं इस संगीतमय वातावरण में भावविभोर थे।

बिस्मिल्ला खां और पण्डित रविशंकर के संगीत के माध्यम से हम जो उत्सव मना रहे थे वह वास्तव में क्या है ? यह है हमारी साझी भारतीयता; यह वह बन्धन है जो भारतवंश, ''दि ग्रेट ग्लोबल इंडियन फैमिली'' के हम सभी लोगों को एकता के सूत्र में बांधता है। वास्तव में हम भारतवासियों और भारतवंशियों के बीच वैश्विक जुगलबंदी की शुरुआत का उत्सव मना रहे हैं।

अनेक संस्कृत शब्दों के अंग्रेजी पर्यायों की तरह संस्कृत के ''वंश'' शब्द का अंग्रेजी पर्याय ''फैमिली'' भी पूरा अर्थ नहीं दे पाता है क्योंकि इसमें ''वंश'' शब्द में निहित भावनात्मक अंश समाहित नहीं है। ''वंशवृक्ष'' का रूपक भारतीय मन के लिए गहरा अर्थ रखता है। हमारे इतिहास और हमारी दंत-कथाओं में भारत में कई वंशों के उदय और लुप्त होने का वर्णन मिलता है।

लेकिन जब हम भारतवंश के बारे में बात करते हैं तो हम अपने मन में एक ऐसे वृक्ष का चित्र बनाते हैं जो शाश्वत है, सनातन है। यह एक सदाबहार वृक्ष है, ऐसा वृक्ष जिसने इतिहास के सभी थपेड़ों को सहा है और अडिग रहा है। अब इस वटवृक्ष की शाखाओं ने विश्व के लगभग सभी देशों में अपनी जड़ें जमा ली हैं, ऐसी जड़ें जमा ली हैं जो समय के साथ-साथ अधिक मजबूत होती जा रही हैं और संख्या में बढ़ती जा रही हैं।

जब गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने एक विश्वविद्यालय स्थापित करने का निर्णय लिया तो उन्होंने उसका नाम रखा - विश्वभारती। मैं सोचता हूं कि यह वही शब्द है जो प्रवासी भारतीय समुदाय को सर्वोत्तम रूप में व्यक्त करता है, क्योंकि आप ही विश्व में भारत हैं और आप विश्व में भारत के प्रतिनिधि हैं।

मित्रों !

प्रवासी भारतीय समुदाय का अस्तित्व - स्वतंत्रता से पहले और बाद में भी - एक वास्तविकता रहा है। लेकिन पहला प्रवासी भारतीय सम्मेलन आयोजित करने में, स्वतंत्रता के पश्चात् लगभग साढ़े पांच दशक लग गए। ऐसा क्यों हुआ ? मुझे इसके दो कारण दिखाई देते हैं—

पहला, दो ऐतिहासिक घटनाओं का शुभ मिलन - भारतीय लोकतंत्र का परिपक्व हो जाना और विदेशों में रहने वाले एवं कार्य करने वाले भारतीयों की स्थिति का सुदृढ़ हो जाना। नई सदी के आरंभ में, भारत विश्व पटल पर एक सशक्त, आत्मविश्वास से भरा हुआ और तेजी से प्रगति के मार्ग पर अग्रसर राष्ट्र के रूप में उभरा है, जो शीघ्र ही विश्व-शक्ति बनने जा रहा है। इस समय, विदेशों में रहने वाले भारतीयों की भी सफलता के शिखर पर पहुंचने में समर्थ समुदाय के रूप में छवि बनी है, जिन्होंने मानव जीवन के विविध क्षेत्रों में उच्च सफलताएं प्राप्त की हैं जिसकी पूरी दुनियां में चर्चा है।

परिणामस्वरूप, अनिवासी भारतीयों/भारतीय मूल के व्यक्तियों के प्रति भारत के दृष्टिकोण में बदलाव आया और अनिवासी भारतीयों/भारतीय मूल के व्यक्तियों ने विदेश में भारत की छवि को बेहतर बनाने में सहायता की। हम कह सकते हैं कि यहां भी एक तरह की जुगलबंदी चल रही है।

विगत में, कई लोग इस अपमान बोध से ग्रस्त रहते थे कि उन्हें काम की तलाश में भारत छोड़कर विदेश में रहना पड़ा। आज वही लोग संतोष महसूस कर रहे हैं कि वे अपनी मातृभूमि के लिए कुछ कर सकने में सक्षम हैं।

दूसरा, कारण यह है कि श्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार ने, प्रवासी भारतीय समुदाय की वास्तविक क्षमता को, पिछली सरकारों की तुलना में बेहतर ढंग से पहचाना। सत्ता में आने से बहुत पहले ही हम गंभीरता से इसके बारे में विचार कर रहे थे कि भारत और भारतीय मूल के लोगों/अनिवासी भारतीयों के बीच सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और आर्थिक संबंधों को सुदृढ़ करने का कौन–सा सबसे अच्छा तरीका अपनाया जाए। दोहरी नागरिकता प्रदान करने का विचार, कम से कम कुछ देशों के बीच में ही सही, भारतीय मूल के कार्ड की शुरुआत करने का विचार हमारे मन में काफी लंबे समय से था।

मैं विनम्रतापूर्वक यह कह सकता हूं कि श्री वाजपेयी की सरकार ने भारतीय मूल के लोगों/अनिवासी भारतीयों से संबंधित मुद्दों को उच्च प्राथमिकता दी और पूरी प्रतिबद्धता तथा धैर्य के साथ उनका समाधान करने का प्रयास भी किवा। श्री एल.एम. सिंघवी के सफल नेतृत्व में उच्च प्राधिकार प्राप्त समिति का गठन करना और उसकी सिफारिशों पर यथाशीघ्र कार्रवाई करना इसी प्रतिबद्धता को परिलक्षित करता है। प्रथम प्रवासी भारतीय सम्मेलन इसी सुदीर्घ और सतत प्रयास का परिणाम है।

इस संदर्भ में, मैं स्पष्ट करना चाहूंगा कि सरकार ने केवल कुछ देशों के संबंध में ही दोहरी नागरिकता पर विचार क्यों किया। हमारे इस निर्णय का मुख्य आधार यह था कि जिस देश में वे रह रहे हैं, उस देश में भी दोहरी नागरिकता से संबंधित कानून हो। जिन देशों में ऐसा प्रावधान मौजूद नहीं है, वहां भारतीय मूल के व्यक्ति दोहरी नागरिकता का लाभ नहीं उठा सकते। दूसरा कारण हमारी राष्ट्रीय सुरक्षा का था।

मैं, यहां सुस्पष्ट रूप से कहना चाहता हूं कि सिंघवी समिति ने कई अन्य महत्वपूर्ण सिफारिशें की हैं। वे सिफारिशें या तो लागू की जा रही हैं या लागू किए जाने के लिए उन्हें गंभीरता से परखा जा रहा है। ये अनिवासी भारतीयों/भारतीय मूल के व्यक्तियों को निवेश के लिए आकर्षित करने हेतु केंद्र व राज्य स्तर पर कार्य प्रणाली को सरल बनाने, कांसुली मुद्दों, हवाई अड्डों में व्यवस्था को सुधारने, अनिवासी भारतीयों/भारतीय मूल के व्यक्तियों द्वारा किए जाने वाले धर्मार्थ दान से संबंधित नीतियों व कार्य प्रणालियों और उन भारतीय महिलाओं के कल्याण के बारे में है जिन्होंने अनिवासी भारतीयों/भारतीय मूल के व्यक्तियों से विवाह किया है।

विदेशों में गए भारतीय श्रमिकों की समस्याओं की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। प्रधानमंत्री ने इस संबंध में उठाए जाने वाले कुछ कदमों का उल्लेख किया है। आगे ऐसे कई कदम उठाए जाएंगे। हम आप सभी से इस विषय में सुझाव व विचार आमंत्रित करते हैं कि अनिवासी भारतीय समुदाय के इस अत्यंत महत्वपूर्ण एवं सम्मानित वर्ग की समस्याओं का प्रभावी समाधान किस प्रकार किया जाए।

मैं, विश्व भर से भारतीय मूल के व्यक्तियों/अनिवासी भारतीयों के संगठनों से मिले बहुमूल्य विचारों व सुझावों के लिए अपना हार्दिक आभार प्रकट करता हूं। जब भी सरकार का कोई प्रतिनिधि आदि विदेश गया, उक्त संगठनों/व्यक्तियों ने उससे विचार–विमर्श किया। बहुत बार ऐसा हुआ कि अनिवासी भारतीय/भारतीय मूल के व्यक्ति स्वयं भारत आए और अपने विचारों व सुझावों से हमें अवगत कराया। कभी–कभी जो उन्होंने शिकायतें व आलोचनाएं भी प्रकट कीं। व्यक्तिगत रूप से मैं, यह कह सकता हूं कि समय–समय पर आप जैसे लोगों के साथ बातचीत करने से मुझे बहुत कुछ जानने का अवसर मिला।

मैं, यहां अमरीका में बसे भारतीय लोगों के योगदान के बारे में विशेष रूप से उल्लेख करना चाहूंगा। यही बात अन्य लोकतांत्रिक देशों के बारे में भी लागू होती है। इन लोगों ने भारत के प्रति अमरीकी सरकार व अमरीकी समाज के दृष्टिकोण को बदलने में निर्णायक भूमिका निभाई है। मुद्दा चाहे पोखरण, कश्मीर या सीमा पार से चलाए जा रहे आतंकवाद का रहा हो, इन लोगों ने अमरीका में विभिन्न स्तरों पर भारत का पक्ष प्रभावी तरीके से रखा और भारत के दृष्टिकोण को बेहतर रूप से समझने में उनकी सहायता की।

परंतु विभिन्न स्तरों पर किए गए इस प्रत्यक्ष प्रयास से बढ़कर एक बात और है जिससे भारत का पक्ष मजबूत हुआ। वह बात यह है कि आज अमरीका में भारतीय समुदाय की ऊंची सामाजिक–आर्थिक हैसियत है। आज पूरा विश्व सूचना प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, बैंकिंग व वित्त क्षेत्र, प्रबंधन, शिक्षा, साहित्य, पत्रकारिता व अन्य क्षेत्रों में भारतीय मूल के अमरीकी नागरिकों की प्रभावशाली, उपलब्धियों को जानता है। इसमें से कुछ लोग तो फिल्मों में भी अपनी छाप छोड़ने लगे हैं।

विश्व के अन्य भागों में भी भारतीयों की यह छवि बनी है कि वे सफलता के शिखर तक पहुंचने में समर्थ हैं। उदाहरण के तौर पर – उस समय हम कितना गौरवान्वित महसूस करते हैं जब इस बात पर गौर करते हैं कि इस समय के एक महान

पुरुष – नेल्सन मंडेला का चर्चित जीवन–चरित दक्षिण अफ्रीका की एक प्रवासी भारतीय महिला, फातिमामीर द्वारा लिखा गया है। कल हमने उन्हें "प्रवासी भारतीय सम्मान" से भी सम्मानित किया है। भारतीय फिल्म निर्माता शेखर कपूर नेल्सन मंडेला के जीवन–चरित पर चलचित्र भी बना रहे हैं। वास्तव में भारत और भारतीय प्रतिभा के लिए यह अपूर्व सम्मान की बात है।

"यहां इस बात का उल्लेख करना भी समीचीन होगा कि नेल्सन मंडेला स्वयं भी एक ऐसे ही यशस्वी प्रवासी भारतीय – महात्मा गांधी से प्रेरित हुए थे।"

माननीय अतिथिगण !

आपने अपनी प्रतिभा और बुद्धि से विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्टता हासिल की है। मैं आपको संक्षेप में और बहुत ही सरल शब्दों में एक संदेश देना चाहूंगा — जो कुछ भी आप कर रहे हैं और जहां भी कर रहे हैं, अपनी श्रेष्ठत्ता बनाए रखें। जितनी अधिक उत्कृष्टता आप हासिल करेंगे, भारत के प्रति आपकी सेवा भी उतनी ही महान होगी।

मैं पूरी तरह से आश्वस्त हूं कि हमारा वर्तमान अतीत की अपेक्षा अधिक सुंदर है और वर्तमान में प्रवासी भारतीयों की सफलता की कहानियों को देखते हुए यह निश्चित है कि भविष्य में आप सफलता की बुलंदियों पर होंगे और इसका लाभ स्वयं आपको, जिस देश में आप रह रहे हैं उस देश को और हमारी मातृभूमि, सबको होगा।

अपनी ओर से हम बेहतर भारत के स्वप्न को साकार करते रहेंगे। जब कभी मैंने प्रवासी भारतीयों की सफलता की कहानियों को सुना और देखा, तो मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि "हम भारत मे ऐसी स्थिति कैसे पैदा करें कि यहां रहने वाले भारतवासी भी इसी प्रकार की सफलता हासिल कर सकें ? माननीय प्रधानमंत्री श्री वाजपेयी जी ने कल ही आपको आश्वासन दिया था कि इस दिशा में हम नि:सन्देह एक संकल्प लेकर आगे बढ़ रहे है। इस प्रयास में आप अपने बौद्धिक एवं वित्तीय संसाधनों के माध्यम से, लोकोपकार और विदेशों में प्रभावशाली ढंग से भारत की सकारात्मक छवि प्रस्तुत करके, हमारे विरोधियों द्वारा किए जा रहे भारत विरोधी दुष्प्रचार का मुंहतोड़ जवाब देकर, सैकड़ों तरह से अपना योगदान दे सकते हैं।

अभी चर्चा–परिचर्चा का सत्र आरंभ होगा और मैं यह बताकर अपनी बात समाप्त करना चाहूंगा कि भारत के भविष्य के लिए मेरा क्या सपना है। बीसवीं सदी, पश्चिम की सदी थी—विशेष तौर पर ब्रिटेन और अमरीका की। विशेषज्ञों की यह धारणा है कि इक्कसवीं सदी पूरब की सदी होगी। हमारा अथक प्रयास होना चाहिए कि इसे हम भारत की सदी बनाएं।

प्रवासी भारतीयों और भावी प्रवासी भारतीयों के लिए इस स्वप्न का क्या अर्थ होगा ? आइए, मैं इसे विस्तार से समझाता हूं। हम सभी जानते हैं कि भारत का एक गौरवशाली अतीत रहा है। भारत एक समृद्धशाली और प्रगतिशील राष्ट्र रहा है, यहां की संस्कृति अत्यधिक उन्नत रही है, जिसकी पूरे विश्व में प्रतिष्ठा है। दुर्भाग्यवश, पिछली सहस्राब्दि के दौरान हमारा देश पराश्रित हो गया। 1947 में औपनिवेशक शासन से स्वतंत्र होकर ही भारत एक नया इतिहास रच सका और स्वयं और अपना भाग्य निर्माता बन सका।

आपके कई पूर्वजों ने या तो बाध्य होकर या किसी जरूरत के कारण भारत छोड़ा। औपनिवेशिक काल में उन्हें गिरमिटिया मज़दूरों (अनुबंधित श्रमिकों) के रूप में काम करने के लिए सुदूर देशों में ले जाया गया। यहां तक कि स्वतंत्र भारत में भी आपमें से कई लोग अपनी प्रतिभा का पूरा–पूरा उपयोग करने के लिए और बेहतर अवसर की तलाश में बाहर चले गए।

यह पहला प्रवासी भारतीय सम्मेलन, हम सबके लिए यह प्रतिज्ञा लेने का ऐसा अवसर है कि भविष्य में कभी भी कोई भी भारतवासी किसी मजबूरी के कारण भारत न छोड़े। विदेशी शासन काल सदैव के लिए खत्म हो चुका है, जिसकी अब कभी संभावना नहीं है। नि:संदेह ही लोगों का कार्य और व्यवसाय के अवसरों के लिए विदेश जाते रहना एक सुखद अनुभव है लेकिन हमारा यह संकल्प हो कि हम भारत में ऐसी स्थिति पैदा करें कि हमारे लोग, खासतौर पर प्रतिभाशाली लोग यहां अवसर और उपयुक्त कार्य वातावरण के अभाव में भारत छोड़ कर जाने के लिए विवश न हों।

इस तरह, मैं अपने सामने एक ऐसा भविष्य देख रहा हूं जिसमें प्रवासी भारतीयों को गर्व होगा कि उनकी मातृभूमि अब एक विकसित राष्ट्र बन गई है और 21वीं सदी का नेतृत्व कर सकेगी। इसी प्रकार मैं, एक ऐसे भविष्य की कल्पना कर रहा हूं जब भारतीयों को इस बात का गर्व होगा कि उनके प्रवासी भाइयों को सभी जगह अपने–अपने समाज के अत्यधिक समुन्नत वर्ग के रूप में प्रतिष्ठा मिली हुई है, वे जहां रह रहे हैं उस देश की चहुंमुखी प्रगति में योगदान दे रहे हैं और भारतवंश को गौरवशाली बना रहे हैं।

धन्यवाद !

आज की शिक्षा और मानवीय मूल्य

—डॉ. जी. डी. सुहाने "शैलेन्द्र"

भूतपूर्व अमेरिकन राष्ट्रपति लिंकन ने एक बार कहा था जब वे एक शिक्षक समुदाय को संबोधित कर रहे थे कि— "यदि हमें पता चल जाए कि हम कहां हैं और किधर जा रहे हैं तो हम फैसला कर सकेंगे कि हमें क्या और कैसे करना है और आज के विद्यार्थी और कल के नागरिक को यह शिक्षा देने का काम गुरूजनों (Teachers) का है।"

राष्ट्रभार कल जिन कंधों पर आने वाला है हम उनकी शक्ति विश्वास और कर्म के प्रति आशंकित हैं। यह आशंका हमारे अंतर की कोर में इसलिए जन्मी है क्योंकि हमारी आज की शिक्षा का ढांचा शुद्ध भौतिक धरातल का होकर रह गया है। अंग्रेजी के जमाने के ढांचे को हम केवल "बाबू संस्कृति से कंप्यूटरीकृत बाबू संस्कृति" में तब्दील कर पाए हैं।

आज समूचा समाज दो खेमो में बंट गया है एक पाचन शक्ति सम्पन्न भूखे लोग और दूसरे अपच वाले पेट भरे लोग। मेल बैठ ही नहीं सकता। जरूरत है कि अध्यापक द्रोण के समान (शर और शाप) उद्योग कर्म और ज्ञान दोनों में प्रवीण हों। गुरूवर्ग को अति भौतिकता और नव धनाढ्यता के दोषों से बचना होगा। भौतिकवाद की सीमित सत्ता के भीतर एक आदर्श जीवन जीना होगा। अन्यथा उदाहरण सामने आने लगे हैं कि विद्यार्थी वर्ग, अध्यापक वर्ग (गुरूजनों) को भी व्यापारियों की तुला पर तौलने लगेगा। ईश्वर न करे वह दिन आए। अन्यथा यथार्थवादी गुरू वर्ग को आत्महत्या करना पड़ सकता है। आज विद्यालयों में ज्ञानकर्म का गांभीर्य नहीं दिखता, इसीलिए शिक्षार्थी में आजीविका की शक्ति नहीं दिखती। विद्यालय से निकलकर विद्यार्थी मात्र कुर्सी की ओर दौड़ता है। 20-22 वर्ष बालक पढ़ेगा तब खेती, व्यवसाय के कालेज में दाखिल होगा। इन वर्षो में बालक पूरा काहिल हो गया होता है। प्रायोगिक कुछ नहीं। अर्जुन को शिक्षा युद्ध के मैदान में कृष्ण ने दी थी, चार दीवारी के भीतर नहीं। इंजीनियर्स, बेचुलर्स, मास्टर्स निकल रहे हैं......... जो मात्र मजदूरों पर हुकुम चलाना चाहते हैं। उनकी डिग्री जैसे उन्हें श्रममुक्त रहने के अधिकार के लिए ही है। हल पकड़ नहीं सकते, मैदानों में काम नहीं कर सकते, बिजली के खंभों पर चढ़ नहीं सकते। उन्हें चाहिए बेल एस्टेब्लिस्ड शाही आफिस और ऐसा सहयोगी वर्ग जो बंगले से आर्डर्स और सुझाव लेकर फील्ड में काम करें। 'The Fall of Roman Empires' नामक पुस्तक का निष्कर्ष है कि रोम का पतन इसीलिए हुआ कि शान शौकत चरम सीमा पर पहुंच गई थी।

राष्ट्रीय चारित्रीकरण और विश्वबंधुत्व दोनों ही तत्व सीधे व्यक्ति के चरित्र और आत्मा से संबंधित है।

स्व. डाक्टर राधाकृष्णन (भू.पू. राष्ट्रपति) के अनुसार

"Moral and Spritual Training is a essential Part of Education"

(Speeches Writings—1962-64)

आज की शिक्षा पाकर डाक्टर्स, इंजीनियर्स, केमिस्ट्स, प्रोफेसर्स, उद्योगपति सब निकल रहे हैं किन्तु मानवीय गुणों से ओतप्रोत हृदय भरे आदमी पैदा नहीं हो पा रहे हैं। जो हैं वे इतने अपर्याप्त मात्रा में हैं कि समाज में 'Balance Power' जैसी नीति नहीं अपनाई जा पा रही।

"एमनेस्टी इंटरनेशनल" के अनुसार आज विश्व में मनुष्यता विध्वंस के उस बिन्दु पर आकर खड़ी है जहां पागलपन की एक चिन्गारी मात्र उसे समूल नष्ट कर सकती है। मानवाधिकार आयोग मध्यप्रदेश के अध्यक्ष श्री गुलाब गुप्ता ने कहा कि "भारत की अफसरशाही और नौकरशाही को अधिक कर्तव्यनिष्ठ संवेदनशील और मानवाधिकार के प्रति अधिक सचेष्ट होकर जन-जन को शिक्षित करना ही समाज के उन्मुक्तिकरण में सहायक है।

बालक के कोमल हृदय में भी मानवता के गुणों का रोपन, अंकुरीकरण और परिवर्धन आवश्यक है। प्रेम और करुणा मानव हृदय के दो अति आवश्यक तत्व हैं। मानवता की श्रीवृद्धि के लिए कष्ट सहने की क्षमता की भावना यह तीसरा गुण है।

महाकवि श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर की प्रार्थना है कि

"Give me the Supreme courage of Love to Suffer at thy will"

(Ravindranath's Letter to Gandhi ji)

अंध धार्मिकता, सांप्रदायिकता एवं जातिवादी धृणा से भी ऊपर उठना नई पीढ़ी के लिए आवश्यक है।

डा० राधाकृष्णान (भू०पू० राष्ट्रपति) के अनुसार

"We are all members of the one household of god whatever names we give to God"

"Cast has become a Political evil and an administration evil."

(Occasional writing of Dr. Radha Krishnan)

"If we with to play any effective Part and role in this world, We have to understand other nation's caste, religion and education."

(Jawaharlal Nehru Speeches Vol. II)

मूलत: शिक्षा के दो ही उद्देश्य हैं।

1. सांस्कृतिक व्यक्तित्व के विकास हेतु शिक्षा

2. उत्पादक व्यक्ति के सर्वांगीण विकास हेतु शिक्षा विज्ञान के अति भौतिकवादी तत्वों के मोह में उसके अति प्रसार में लगकर व्यक्ति ने शिक्षा के मूल उद्देश्य को पीछे ढ़केल दिया है।

गांधी जी ने कहा था—

"Now a days scientists are unable to grasp things in their entirely and have become narrower, they seem to have no grip on life as a whole"

(Mahatma Gandhi Speeches)

प्रसिद्ध विचारक रोम्या रोला का कथन है—

"सत्य और मूल्य समाज में साथ-साथ जन्मते और बढ़ते हैं।"

आज के इस जातिवादी उग्रता के युग में जहां राजनैतिक पतन जाति और संप्रदाय को लेकर हो रहा है वहां विश्वबंधुत्व और राष्ट्रीय एकीकरण की भावना बालकों के हृदय परिर्वतन और वैचारिक संवर्धन से ही संभव है। अपनी संस्कृति की जड़ों से जुड़ी शिक्षा शिक्षार्थी को एक सुसंस्कृत सुसम्य नागरिक बनाने में सहायक होगी। केवल आधुनिकतम टेक्नालाजी और नौकरीयां पाने या रोज़ी रोटी भर कमा लेने की क्षमता वाली शिक्षा छात्रा के एकांगी विकास ऊपरी तल के विकास भौतिक विकास की खिड़कियां भले ही खोल सके किन्तु सर्वांगीण विकास के लिए अंतरतम के विकास के लिए शुद्ध हृदय की संपत्तिवान नागरिक के लिए व्यक्ति का संस्कृतिक विकास के लिए वह नाकाबिल ही सिद्ध होगी।

दार्शनिक राधाकृष्णन के अनुसार—

"The sources of disintegration, conflict are located within ourselves, untill we are able to change our nature, these things can not be removed."

(Occasional Speeches Writing-Ill Series)

इस क्षेत्र में आज की कन्याओं, जो कल माताएं बनने वाली हैं........... की ओर भी ध्यान देना होगा। महिलाएं देश का दर्पण होती हैं। यही कारण हैं कि हम युगों से भले समाज के निर्माण हेतु गार्गी, मैत्रेयी, सीता, सावित्री, क्रिश्चिना रासेटी और मीरा तक को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत करते आ रहे हैं। ये ऐसे मानक हैं जो सदा सर्वदा समाज में अपनी छवि ओज और वैचारिक सौन्दर्य की किरणें फैलाते रहेंगे।

एक फ्रेन्च दार्शनिक के अनुसार—

"If you want me to tell you what a nation is like, what a social organisation is like tell me the position of nation's women and thinkers.

शिक्षा से अंतर की मेद्या का जागरण होना चाहिए न कि केवल विचारों से भरना चाहिए। बहुत सारे विचारों का बोझ ढोने वाला और किसी भी सुन्दर विचार को अंतस में न उतार पाने वाला व्यक्ति "बुद्धिजीवियों की जमात का वैसाखनंदन हो सकता है, एक सच्चा वैचारिक क्रांतिधर्मी नहीं हो सकता। आत्मज्ञान मूल है शेष उसके परिणाम हैं। केवल दिमाग में स्मृतियों को भी देने वाली शिक्षा आत्मोन्नयन-कारिणी कैसे हो सकती है ? शिक्षा वह है जिससे शिक्षार्थी में ऐसी अंतर्दृष्टि का जन्म संभव हो जो व्यक्ति को सांप्रदायिकता, जातिवाद, अलगाववाद और अधार्मिकता जैसे संकीर्ण तत्वों से बचा सके।

ओशो (रजनीश) के अनुसार—

"मनुष्य को पुन: जड़ें देनी हैं, पुन: जमीन देनी है ताकि शुद्ध मनुष्यता का जन्म संभव हो। वे जड़ें आत्मा की

729 HA/03—2A

हैं। जमीन धर्म की है। इतना यदि हो सके तो समाज में नई मनुष्यता के फूल फिर से खिल सकते हैं।" देश में जो आज सर्वत्र अव्यवस्था, राग, द्वेष, वैमनस्य, कुंठा, अनास्था और हाहाकार है उसका कारण अपनी चेतना से अवगत न होना है। संभवतया शिक्षा का यह सबसे बड़ा दोष है। विज्ञान ने हमें चिड़ियों सा उड़ना सिखाया, मछलियों सा तैरना सिखाया, आज विज्ञान अंडज की प्रकृत्ति और प्रवृत्ति को परिवर्तित कर सकने में सक्षम हो रहा है, मानव क्लोन जैसे अजूबे हो रहे हैं किन्तु मनुष्य को आदमी बनकर पृथ्वी पर रहना हम नहीं सिखा पाये हैं। वर्णसंकरता के मामले में मनुष्य ईश्वर के समतुल्य हो पाने को हाथ पैर मार रहा है किन्तु ईश्वरीय गुण करूणा, अहिंसा, क्षमा, दया के तत्वों के विकास का परिवर्धन का कोई उपाय नही खोजा जा रहा है। इसीलिए विज्ञान का संबंध तन से जोड़ना उचित है। आत्मा के तल पर धर्म का अस्तित्व बरकरार रहे, शिक्षा को यह दायित्व भी स्वीकार करना चाहिए। हमने संपत्ति का वैभव ही सब कुछ समझ रखा है। एक वकील ने अपने अंतिम समय में वसीयत नामा लिखा जिसमें उसने इच्छा जाहिर की "मेरे मरने के बाद मेरी संपत्ति मूर्खों और पागलों में बांट दी जाए। क्योंकि यह सारी संपति मैंने ऐसे ही लोगों से कमाई है और परमात्मा के राज्य में प्रवेश के पूर्व उन्हीं को वापिस कर देना चाहता हूँ।"

प्रसिद्ध विचारक रोम्या रोला कहता है—

"किसी मनुष्य का ज्ञान इस बात पर निर्भर नहीं करता है कि उसने कितना पढ़ा, वरन इस पर निर्भर है कि कितना अनुभव किया। बहुत सारा भोजन पेट में भर लेने से शक्ति उत्पन्न होने से संबंधित नही है संबंध है कि उस भोजन का कितना अंश पचकर ऊर्जा देने काबिल हुआ।"

हमारा संविधान सामाजिक न्याय आर्थिक उन्नति और स्वतंत्र आत्मा के लिए बाध्य है। सत्य और मूल्य समानांतर चलते हैं। हम दूसरों से कुछ पाना चाहें और खुद कुछ भी न दें, यह विचार टिक नहीं सकता।

भागवत गीता के अनुसार-

"यथा इच्छसि तथा कुरू" ही सत्य है।

मैं मानता हूँ कि शालाओं के बच्चों के लिए अध्यापक और अनुशासन के मामले में अध्यापक बंधु स्वतंत्र नहीं हैं। हर संस्था की अपनी एक निश्चित लीक (Certain Pattern) है जिससे अध्यापक बंधु बंधे हैं। फिर भी देवतुल्य अध्यापकों का पावन कर्तव्य है कि वे नई पीढ़ी को इन आत्मिक सूत्रों और जीवन मूल्यों से परिचित कराएं। स्वामी रामकृष्ण परमहंस एक शक्तिशाली डायनुमा (शक्ति प्रत्यावर्तन या शक्ति अंतरण) का काम करते थे और इस पुण्य कार्य में उन्हें महान दैहिक कष्ट भोगने पड़ते थे। अत: अध्यापक का भी डायनुमा बनना नए राष्ट्र के नूतन निर्माण में सहायक हो सकता हैं। आवश्यकता है केवल अध्यापकों में राष्ट्र और राष्ट्र के भावी निर्माताओं के प्रति पर्याप्त सहनशील त्यागी और जागृत होने की।

कार्ल सेंडवर्ग ने कहा था—

"इससे पहले कि युद्ध के शास्त्र मनुष्य को मिटा दें हमें चाहिए कि मानवता के शास्त्र की शरण लें।"

उपाय बस एक ही है कि एक-एक विद्यार्थी का हृदय परिष्कृत किया जाये। विश्व सता पर ऐसा होना और जरूरी है। अंगार के चक्र में बैठकर बारूद के गोलों से खेल नहीं खेला जा सकता। आज जबकि विज्ञान ने मानवता को अंगार चक्र में बैठा दिया है तो बारूद से बचना ही होगा। जरूरत है ऐसी शिक्षा की कि स्वतंत्र और निष्पक्ष विचार, महत् अनुभूति और सत्यकर्म की जिज्ञासा जागृत हो सके।

टैगोर महाकवि ने कहा था—

"I put my faith in the individuals who think clearly feel nobody and act rightly"

अब प्रश्न उठता है कि उपर्युक्त महानुभावों के बताए लक्ष्यों को पाया कैसे जाए? आध्यात्मिक वेत्ताओं और आधुनिक परिवेश के चिंतकों के अनुसार ये लक्ष्य 'ध्यान' के माध्यम से पाए जा सकते है। ध्यान देह, मन, चेतना तथा व्यक्तिगत जीवन में संतुलन स्थापित करने में सहायक है। ध्यान की क्रिया से मनुष्य स्वयं के अंतर के विकारों से लड़ना सीखता है।

नेहरू जी ने भी एक बार कहा था—

"Do not fight with your opponent, but with ill-will in your heart."

आज की सारी राजनीति और पूरा समाज सभ्यता पर टिका है। यह सभ्यता भी आयातित है। यह पश्चिम के भागदौड़ प्रिय समाज से हमें मिली है। नई पीढ़ी सदैव नूतन और चकाचौंध उत्पन्न करने वाली सभ्यता के पीछे आंख बंद कर भागती है। लेकिन सभ्यता तो ऊपर की वस्तु है। कल के कपड़ों की फैशन आज बदली है तो आज की नई फैशन कल बदल जाएगी फैशन का स्थायी मूल्य नहीं होता। किन्तु संस्कृति मनुष्य के संस्कारों से संबंधित है। संस्कारों का जुड़ाव आत्मा से होता है। सभ्यता की बनावटी दिखावटी खोल में संस्कृति

729 HA/03—2B

का सत्य ढंप गया है। अध्यापकों का विद्यार्थियों से सतत् सचेतन और ज़ीवंत संबंध रहता है। अध्यापक चाहें तो संस्कृति को पुन: जीवन दान दे सकते हैं। सभ्यता की खोल उतार कर संस्कृति को उजागर कर सकते हैं। सभ्यता की नकली पर्तों को छांटकर संस्कृति के प्रकाश को पुन: उत्कीर्ण कर सकते हैं। ऊपर के आचरण से व्यक्ति बाहर तो परिवर्तित दिखाई पड़ सकता है लेकिन उसका अंतस अपरिवर्तित ही रहेगा। जब तक अंतर प्रकाशित नहीं होगा व्यक्तित्व का विकास नहीं होगा। और यह ध्यान रखने योग्य तथ्य है कि व्यक्ति महत्वपूर्ण नही, किसी समाज अथवा राष्ट्र के विकास में व्यक्तित्व महत्वपूर्ण होता है। अंतर के इस प्रकाश जागरण के लिए स्वयं से लड़ना नहीं पड़ता बल्कि स्वयं को जानना पड़ता है। स्वयं को जानकर ही अज्ञान को पराजित किया जा सकता है। तभी ज्ञान के नये शिखर दीखते हैं। अज्ञान का अंधकार हटे तो ज्ञान के नये द्वार खुलें। स्वयं को जानकर बहुत से भ्रम टूट जाते हैं। आदमी अपने भ्रमों से अपनी कुरूपता से अपनी नग्नता से घबराता है, इसलिए उस पर पर्दा डालने का प्रयास करता है। शरीर के घाव छिपाने से मिटते नहीं बल्कि विषाक्त (Septic) हो जाते हैं। हमने घावों की सड़ांध छुपाने के लिए बहुत से सुगंधित पदार्थ छिड़क रखे हैं। किन्तु एक दिन सारी सुगंधियां बेकार हो जाती हैं।

तो फिर स्वयं को जानने का, सीधा जानने का अर्थ क्या है ? स्वयं को जानने का अर्थ है कि विद्यार्थी में क्षमता पैदा की जाये कि वह सांत्वना से दूसरों के विचार (opinions) सुने तो किन्तु ग्रहण तभी करे जब उसे मानने को आत्मा तत्पर हो विद्यार्थी देख सके कि भीतर वासनाओं में क्रियाओं में आकांक्षाओं में क्या छुपा है। और तब विद्यार्थी ने जो एक काल्पनिक मूर्ति अपने विषय में बना रखी है वह टूटती नजर आएगी और सत्य की मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा हो सकेगी। एक मूर्ति के टूटने से खाली स्थान में शुभ का प्रवेश संभव होगा। एक यथार्थवादी शुभ का एक ऐसा शुभ जो थोपा नहीं गया, पैदा हुआ। एक ऐसा यथार्थ जो अंतर से बाहर तक मंगल को जन्म दे सकेगा।

शिक्षा दान करने वाले अध्यापकों के जीवन को मैं एक साधना मानकर चलता हूं और अध्यापक यदि आज इस जीवन को व्यापार मानकर चलने लगा है तो इस में अध्यापक का कम और सरकारी मिशन, उसकी योजना पद्धति की अधिक जिम्मेदारी है। साधना के जीवन की पहली शर्त है अभय (Fearlessness) की अंधेरी रात में अनजान बीहड़ों में जिस साहस की आवश्यकता होती है उससे कहीं ज्यादा अध्यापक को साहसी होना पड़ेगा। बिना कठोर साधना के इस जीवन की सफलता कोरी है... किन्तु मैं इस साधना को एक वैज्ञानिक की साधना मानता हूं। वैज्ञानिक को यदि सारे उपकरण, सारे साधन उपलब्ध न हों, ज़रूरी साहित्य प्राप्त न हो और यदि वह जीवन और परिवार की आवश्यकताओं से पूर्णत: मुक्त न हो तो वैज्ञानिक की साधना असंभव ही नहीं, प्रयोग और सिद्धियां खतरनाक भी हो सकती हैं। हमारे देश की बहुत सी प्रतिभाएं उचित सहायता, सम्मान और प्रयोगशाला के अभाव में आज विदेशों में सेवाएं दे रहीं है। हमने सदैव कोरे धार्मिकों या राजनीतिज्ञों को पूजा है। किन्तु यथार्थवादी सत्य के पथिकों को दुत्कारा गया। वैज्ञानिक मस्तिष्क और धार्मिक हृदय ऐसे दोनों का समन्वयी व्यक्तित्व ही देश का सच्चा निर्माण कर सकेगा।

सारी आवश्यकताओं, विपरीत स्थितियों और कष्टों के बावजूद एक संकल्प जरूरी है कि आज का विद्यार्थी कल का नागरिक है जिससे राष्ट्र बनेगा।

यदि हमने विद्यार्थियों को सत्य के पथ न दिखाए उनका सही दिशा निर्देशन न हो सका तो सारा राष्ट्र असत्य और अंधकार में डूब जाएगा। हम सब, शिक्षक भी, शिक्षार्थी भी इस पंथ के पथी हों परमात्मा से ऐसी प्रार्थना के साथ मेरे अनंत प्रणाम।

मेन मार्किट, शहडोल (म.प्र.) 484001

विलक्षण और वैज्ञानिक हिंदी की अविराम बीहड़ यात्रा

—राजीव उनियाल

यात्रा के स्वतंत्रता-संग्राम में तीन बिन्दु-प्रधान तत्व थे- गांधी, हिंदी और अंहिसा-आंदोलन। गांधी और अंहिसा का तो बहुत प्रचार-प्रसार हो चुका पर इस प्रचार-तंत्र ने हिंदी को भी समीचीन स्थान दिया। कौन नहीं जानता कि "झंडा ऊंचा रहे हमारा" का प्रसिद्ध गीत हिंदी में है और हिंदी के लगभग सभी महान कवियों ने अपनी देशभक्ति के गीतों से हिंदी को गौरव प्रदान किया। हिंदी विषय की कुछ विशेषताएं और भी हैं। हिंदी की कुछ ऐसी विशेषताएं है जो विश्व की किसी अन्य भाषा में (संस्कृत से निकाली भाषाओं को छोड़कर) संभवत: अन्यत्र बिल्कुल नहीं मिलतीं। कुछ विशेषताओं का संक्षेप में यहां उल्लेख किया जा रहा है।

युक्तिसंगत

हिंदी में वर्णमाला के अक्षर जैसे लिखे जाते हैं ठीक वैसे ही बोले जाते हैं जैसे 'क' और 'ल' मिलकर 'कल' बोला जाएगा। जबकि अंग्रेजी में ऑफन (often) लिखने के लिए ओ, एफ, टी, इ, एन लिखा जाता है। जिसे वास्तव में आफ्टन बोला जाना चाहिए।

वर्णमाला की व्यवस्था इतनी अद्‌भुत है कि सभी स्वर एक साथ लिखे जाते हैं। व्यंजनों का भी एक विशेष क्रम है। एक ओर ओंठ से बोले जाने वाले (प फ ब भ म) एक पंक्ति में लिखे जाते हैं। दांतों की सहायता से बोले जाने वाले व्यंजन जैसे त, थ, द, ध और न एक साथ लिखे जाते हैं। इतनी सुन्दर व्यवस्था किसी भी लिपि में नहीं है।

वैज्ञानिक

हिंदी में अधिकांश शब्दों की व्यत्पत्ति संस्कृत से हुई है और अधिकांश शब्द वैज्ञानिक हैं। जैसे अक्षर का अर्थ है- अ=नहीं तथा क्षर=नष्ट होना- नष्ट न होने वाला। यह वैज्ञानिक उपलब्धि उन्नीसवीं सदी में मार्कोनी की है। मार्कोनी ने और उस समय के प्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री जगदीश चन्द्र बासु ने पता लगाया था कि बोले जाने वाले अक्षर नष्ट नहीं होते, ध्वनि तो आकाश में थिरकती (वाइब्रेट करती) है (भारत में ईसा से लगभग 300 वर्ष पूर्व पाणिनी ने यह बात कही थी)। भूगोल शब्द स्वयं बताता है कि पृथ्वी गोल है जबकि उर्दू में भूगोल के लिए शब्द है जगराफिया जोकि अंग्रेजी भाषा के 'ज्योग्राफी' शब्द का अपभ्रंश है। फारसी शब्द के आसमान का अर्थ है- असा यानी चक्की और मान यानी मानिन्द-चक्की के समान। पर हिंदी में आकाश का अर्थ है शून्य जोकि सर्वथा वैज्ञानिक है और अंग्रेजी में ईथर शब्द का समानार्थी है। पादप का अर्थ है पैरों से पीने वाला अर्थात् पेड़, पौधे अपनी खुराक पीते हैं, खाते नहीं। कितने लोगों को मालूम है कि विश्व प्रसिद्ध डॉ० जगदीश चद्र बोस ने अपने मित्र कपिल देव शास्त्री के सामने स्वीकार किया था कि वनस्पति में जीव हाने की प्रेरणा उन्हें संस्कृत साहित्य से मिली (उन्होंने बताया कि जब उन्होंने शब्द देखा और यह पाया कि यह शब्द शस् धातु से बना है और शस् का अर्थ मारना है तो उन्हें यह आभास हुआ कि मारा तो उसे जाएगा जिसमें जीव हो)। इसी प्रकार अंग्रेजी का 'मेनटर' टीचर तथा उर्दू का उस्ताद शब्द में वह भाव है ही नहीं जोकि 'गुरु' शब्द में हैं। 'गु' का अर्थ है 'अंधकार' तथा 'रु' का अर्थ है 'दूर करना' अर्थात् वह व्यक्ति जो आपके अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करता है।

शब्द भण्डार—विशाल

हिंदी का शब्द भण्डार बहुत बड़ा है। केवल सूर्य के लिए रवि, पतंग, दिनेश, सूर्य, भानु, दिनवंत, दिवाकर, दिनकर, भास्कर, अर्क, आदित्य, मिहिर आदि शब्द हैं जबकि अंग्रेजी में ले-देकर शायद एक ही शब्द है और फारसी में भी कुछ ही हैं। कमल के लिए पंकज, जलज, सरोज, अरविंद, इन्दिवर, सरोरूह आदि शब्द हैं। सभी को पता है कि भगवान विष्णु के एक हजार नाम हैं, दुर्गा माता व शिवजी के सैंकड़ों नाम हैं।

अर्थपूर्ण

जहां तक भाषा की वैज्ञानिकता का संबंध है, इस विषय पर इतना कुछ कहा जा सकता है कि वह पूरी पुस्तक का कलेवर बन सकता है। अंग्रेजी में फिलोसफी शब्द 'फिलो' और 'सफी' से मिलकर बना है 'फिलो' का अर्थ है ज्ञान और 'सफी' का अर्थ है प्रेम। ये दोनों शब्द यूनानी हैं जिनका

मिलकर अर्थ है ज्ञान का प्रेम, यानी मानवीय तर्क। परन्तु दर्शन का अर्थ देखना यानी साक्षात्कार के बाद अनुभवगम्य ज्ञान। ऋषि—दर्शनात (निरूक्त) अर्थात् ऋषि वह है जो भविष्य देख सके जिसका कुछ अंग्रेजी पर्याय है। विजनरी (visionary) देवनागरी वर्णमाला में जिसमें हिंदी लिखी जाती है, लगभग सभी अक्षरों का अर्थ है जैसाकि संसार की दूसरी भाषाओं में नहीं है।

देवनागरी वर्णमाला में प्रत्येक अक्षर का कुछ न कुछ अर्थ है। अ का अर्थ 'नही' है जैसे अस्वीकार, अनादि, अपार, अगम्य आदि। आ का अर्थ 'तक' जैसे आजीवन, आबालवृद्ध (बच्चे से बूढ़े तक) आजानुबाहु (जिसकी भुजाएं घुटने तक हों जैसे सम्राट विक्रमादित्य और गांधी जी)। ''ख'' का अर्थ आकाश और ग का अर्थ गमन अर्थात् चलना या उड़ना जैसे खग (आकाश में जाने वाला) द का अर्थ देने वाला (जलद, नीरद आदि) ज का अर्थ उत्पन्न होना (जैसे जलज, आत्मज)। इसी प्रकार सांप का पर्यायवाची है—पन्नग, पद+न+ग—पैरों से न चलने वाला। दंडशूक—डसने वाला; चक्षुश्रवा—आंखों से सुनने वाला। युक्तदण्ड अर्थात् यथापराध दंड, सौस्नातिक नहा धोकर तरोताजा बनना। सुख अर्थात् ख (इन्द्रियों) को अच्छा लगने वाला और दु:ख इन्द्रियों को अच्छा न लगने वाला। एक की धातु से कई शब्द बनाए जा सकते हैं जैसाकि दृक से बनने वाले शब्द हैं दृश्य, दर्शन, दृष्टि, दर्शक, दर्शनीय, दर्शायिता दुर्दर्श आदि। इसी प्रकार एक ही धातु से बनने वाले शब्द हैं: प्रहार, अहार, संहार, परिहार आदि।

आत्मसात करने की क्षमता

जैसे अंग्रेजी भाषा में विदेशी शब्दों तथा भावों को ग्रहण करने की अद्भुत क्षमता है ऐसे ही हिंदी में आज उनकी अलग पहचान करना कठिन है। ''इश्तहार लगाना मना है'' में 'इश्तहार' फारसी है, 'लगाना' हिंदी है और 'मना' अरबी है। यहां तक तुलसीदास और सूरदास जैसे महाकवियों ने फारसी व अरबी शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है। मुहावरों का प्रयोग तो अंग्रेजी, अरबी तथा फारसी तीनों ही भाषाओं से शाब्दिक व अन्य रूप से हुआ है। ''मुहावरा'' शब्द स्वयं अरबी का है। कहीं तो ''फारसी'' से ज्यों का त्यों उठाकर हिंदी में मुहावरा अपनाया है जैसे ''गुल खिलाना'' फारसी से है। ''नेसेसिटी इज़ द मदर ऑफ इन्वेशन'' का हिंदी रूपान्तर अत्यन्त सुन्दर और अंग्रेजी को भी मात देता है—''आवश्यकता आविष्कार की जननी है''। सफेद हाथी तो व्हाइट ऐलीफेन्ट के लिए उचित प्रयुक्त हुआ है। हम यहां संस्कृत से लिए गए मुहावरों की चर्चा इसलिए नहीं करेंगे क्योंकि उनकी गिनती असीम है।

जिस जलेबी पर बहुत से भारतीय जान छिड़कते हैं वह अरबी शब्द ''जलाबी'' का अपभ्रंश है और भी ऐसे ही कई विदेशी शब्द हैं जिन्हें हिंदी ने पूरी तरह अपना लिया है जैसे—फिरकी, शरबत, फलूदा, कुल्फी, कीमा, कबाब, पुलाव, हलवा, गुलाबजामुन, कोफता, बेसन आदि। अंग्रेजी के शब्दों की तो गिनती ही नहीं है। लालटेन (लेनटर्न), स्टेशन, रेडियो, टी वी, डॉक्टर, जंक्शन, रेलवे, गार्डन, पैंट, कोट, बूट, गाइड आदि। संभवत: अधिकांश लोगों को पता है कि जिस रुपये के पिछे दुनिया दिवानी है उसका सबसे पहले प्रचलन शेरशाह सूरी ने किया था और इसका प्रयोग अब भी भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, इन्डोनेशिया, नेपाल में होता है। तरकारी और सब्जी तथा ''मेवा'' शुद्ध फारसी शब्द हैं।

इस तरह हमने देखा कि अनेक विलक्षण गुणों वाली हिंदी एक सशक्त, जीवन और प्रवाहमयी भाषा है जिसका अविरल प्रवाह असंदिग्ध है। तेरहवीं सदी से हिंदी निरन्तर रूप बदलती आज के वर्तमान रूप पर आसीन हुई।

हिंदी की बीहड़ अविराम यात्रा

इस यात्रा के दौरान उसके बदलते तेवरों की मामूली झांकी दी जा रही है। हिन्दी का मूलरूप शौरसेनी अपभ्रंश हैं। मुसलमान लोक 'सिंध को हिंद' कहते थे इसलिए हिंद की भाषा हिंदी कही गई। हिंदी साहित्य का आदिकाल अत्यंत विवादास्पद है। अंग्रेज विद्वान ओर शौधकर्ता ग्रियर्सन 1400 ई. से. मिश्रबंधु 1343 विक्रमी संवत से आचार्य शुक्ल 1375 वि.स. से इसका प्रारंभ मानते हैं। उस काल में कुछ प्रसिद्ध ग्रंथों के नाम हैं : पृथ्वीराज रासो (1225–1249 सं.), खुसरो का साहित्य (13वीं शती), विद्यापति पदावली (संवत 1460) आदि। कहा जाता है कि पृथ्वी राज चौहान जब अंतिम युद्ध में हार गए तो उन्हें मोहम्मद गौरी ले गया और चन्द कवि ने शब्दभेदी बाण से मोहम्मद गौरी को मारने की योजना बनाई। चन्दवरदाई ने यह दोहा कहा :

''आठ बांस चौबीस गज, अंगुल अष्ट परवान।
ता ऊपर सुल्तान है, मत चूकै चौहान।''

कहते हैं कि चन्दरवरदाई के इस संकेत पर सम्राट् पृथ्वीराज ने शब्दभेदी बाण से मोहम्मद गौरी को वहीं ढेर कर दिया।

उक्त दोहे की भाषा का हिंदी से कितना अधिम साम्य है। मोहम्मद गौरी ने भारत पर विजय के बाद अपने शासित इलाकों में शासन का कामकाज हिंदी देवनागरी लिपि में करवाया। उसने अपने सिक्कों पर हिंदी में हिंदू देवी-देवताओं के चिन्ह अंकित कराए। उसके समय का एक टका (रुपया) भारतीय पुरातत्व विभाग में अब भी सुरक्षित है। (राजभाषा की हिंदी कहानी—डॉ. राम बाबू शर्मा)। अलाउद्दीन खिलजी ने तेरहवीं सदी में जिन दक्षिण भारत के इलाकों पर विजय प्राप्त की वहां की राजकाज की भाषा हिंदी रखी। इस हिंदी में फारसी के शब्दों का काफी पुट होता था।

सौलहवीं शती का भारत का संविधान

यों तो सोलहवीं सदी में भारत के संविधान की कल्पना मात्र मजाक सा लगता है पर यह जानकर आश्चर्य होता है कि सम्राट अकबर ने एक संविधान तैयार किया था जिसका नाम था ''अमल दस्तूर''। यह देवनागरी लिपि में हिंदी में लिखा गया, 14 पृष्ठों का दस्तावेज है। और अपनी गई गुजरी हालत में राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर में महफूज़ है। इसका उद्देश्य था कि सम्राट के अधिकारीगण शपथ लें कि वे जनता के हित के लिए सम्राट द्वारा निर्धारित नियमों का पालन करेंगे। इसकी भाषा का एक अंश:

जैसा आदमी होई तिस की तैसी सजा करे · · · · · ·

आंपने दिल में समझौजू कौन बारीक चूक ढाकने की है · · · · · · ·

मृत्यु दण्ड के संबंध में सम्राट ने न्यायाधीशों को यह व्यवस्था दी थी, ''अर चूक मारने की ही होई तो मेरी दरगाह भेजें, अर हकीकति, उसकी लिखै जु कुछ मेरा हुकम हो ही सौ करे · · · · · · ·

अर्थात् यदि अभियुक्त की गलती (चूक) मृत्युदण्ड के योग्य हो तो उसका वास्तविक विवरण सहित मेरे दरबार में भेजा जाए और जैसा मेरा हुकम हो वैसा किया जाए। उक्त वाक्य में जो के स्थान पर 'जु', 'हो' के स्थान पर 'होही', 'गलती या अपराध' के स्थान 'चूक' 'और' के स्थान पर 'अर' ध्यान देने योग्य हैं। भाषा और शब्दों का यह सफर बहुत लम्बा है। मुगल सम्राट स्वयं जब सामंतों, मंत्रियों और माननीय अतिथियों से या प्रजा से बात करते तो वे प्राय: हिंदी (कभी-कभी फारसी मिश्रित) प्रयोग करते थे। उक्त 'अमल दस्तूर' के अनुसार अधिकारियों को ये शपथ लेनी पड़ती थी।

''षलक'' (खलक) के सुष (सुख) पावणे (पावने) के वास्ते व नीति मारग वासते पंहेली राह षूब (खूब) यही है जु सबका सेवा कअर परामार्थ के बीचि सुषी (खी) साहिब के साये · · · · · · ·

मुसलमान बादशाहों द्वारा हिंदी का प्रयोग

''तारीखे फरिशता'', जिल्द चहारूम (4) उसमानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद में लिखा है कि ''इब्राहिम आदिल'' ने फारसी जबान को दफ़्तर से खारिज कर हिंदी उसकी जगह रायज की। सम्राट शाहजहां का जीवन चरित्र जनाब अब्दुल हमीद लाहौरी ने ब्रजभाषा में लिखा है। संवत 1724 (1667) में सम्राट औरंगजेब के दरबार से भेजे गए एक पत्र का नमूना ''स्वस्ति श्री संवत 1724 वर्ष भाद्र सुधि 8 अथैव पातसाह श्री सुल्तान शाह आलम ग्यरी साहिब कुरान शानी सकतराया शिरोमणी महाराज राजेश्वर एह वो पातसाह श्री श्री श्री श्री श्री श्री श्री अवरंगजेब (औरंगजेब) सबर (सर्व) मुद्रा राज्य करोति तस्यादेशात् (उनके हुकम से) श्री गुजरात मध्ये · · · · · ·'' इसमें अनेक शब्द तो शुद्ध तत्सम हैं। ऐसी भाषा हिंदी, फारसी शब्दों की खिचड़ी होती थी।

महाराणा प्रताप का पट्टा

उदयपुर रियासत में हिंदी में सैकड़ों सरकारी दस्तावेज मौजूद हैं। इनमें महाराणा प्रताप का पट्टा विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। इसकी भाषा राजस्थानी, मेवाड़ी और हिंदी का मिला-जुला रूप है। उस समय जोधपुर, उदयपुर, कोटा, बूंदी, आमेर, बीकानेर आदि सभी देसी रियासतों में राजकाज हिंदी में होता था। नि:संदेह वह भाषा आज की सी टकसाली भाषा नहीं थी।

मराठा शासन और हिंदी

मराठा शासकों की भी राजकाज की भाषा हिंदी थी। पर इस हिंदी को खिचड़ी कहना अधिक उपयुक्त होगा। शासन से संबंधित जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है उनमें से कुछ हैं प्रवाना (परवाना), ढीढोमा (घोषणा), चपरासी (चपरासी), गिरफ़्तार (गिरफ़्तार), ईश्तहार (इश्तहार), दशखत (दस्तखत), कुमुक (सहायता), मोनादी (घोषणा), चीठी (चिट्ठी), नालीश (रिपोर्ट नालिश), रूबरह (आमने-सामने), मुद्द (मुदई), हींदवी (हिंदी), कपीतान (कप्तान), इनाहित (इनायत), सनदि (सनद), दाषिल (दाखिल), वोकील (वकील), तलब (वेतन), तैनाथ (तैनात), रदबदल (रद्दोबदल), उम्मेदवार (उम्मीदवार)।

अनुवाद का प्रचलन

मराठी शासन में अनुवाद का प्रचलन था। मराठी पत्रों में एक पत्र ऐसा मिला जिसका मूल रूप तो मराठी में है पर प्राप्तकर्त्ता की सुविधा के लिए उसका हिंदी अनुवाद भी साथ में दिया गया है यानी भारत की आम भाषा हिंदी ही थी। यह पत्र नाना फड़नवीस (बाला जी जर्नादन) ने उस समय के महाराजा जयपुर को लिखा था। यह पत्र 19 जनवरी, 1783 को लिखा गया था।

ऊपर झांकी थी उस लम्बी बीहड़ अविराम यात्रा की जोकि हिंदी ने वर्तमान चरण तक पहुंचने में तय की परन्तु दुख इस बात का है कि इतनी समृद्ध, वैज्ञानिक और प्रगतिशील भाषा होने के बावजूद अभी यह अपना अपेक्षित हक नहीं पा सकी।

विचित्र किन्तु सत्य

हिंदी को राजभाषा पद पर आसीन करने की पैरवी करने वाले प्राय: गैर हिंदी भाषा-भाषी थे। महात्मा गांधी गुजराती थे पर वे हिंदी अपनाने वाले सबसे बड़े नेता थे। उन्होंने कुछ बातें आश्चर्यजनक की, एक तो अकेले उन्होंने हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी में हिंदी में भाषण दिया जबकि सभी ने अंग्रेजी में भाषण दिया। भाषण, हिंदी में दिए जाने के कारण वहां मौजूद राजे महाराजे और अंग्रेज भक्त बहुत नाराज हुए। भारत को जब स्वतंत्रता मिली और एक विदेशी पत्रकार ने उनसे संदेश देने को कहा था तो उन्होंने दो टूक उत्तर दिया "दुनिया से कह दो गांधी अंग्रेजी नहीं जानता"। जब स्वामी दयानन्द बंगाल में धर्म प्रचार कर रहे थे तो केवल संस्कृत में ही उनका प्रवचन होता था जिस पर बंगाली महाशय (श्री केशव चन्द्र सेन) ने गुजराती स्वामी (दयानन्द स्वामी) से प्रार्थना की कि वे हिंदी में भाषण दें। स्वामी दयानन्द तबसे संस्कृतनिष्ठ हिंदी में भाषण देने लगे। जाहिर है कि देश की आम जनता हिंदी जानती समझती थी।

संविधान के प्रकाण्ड विद्वान डॉ. सचिदानन्द सिन्हा (जिन्होंने संविधान सभा का उद्घाटन किया था) को एक सज्जन मिलने आये और ठेठ आक्सफोर्डियन जहजे में उनसे बात करनी शुरु कर दी। डॉ. साहब ने ठेठ फ्रेंच में उत्तर दिया तो वे सज्जन झेंप गए और बोले "मैं फ्रेंच नहीं जानता"। डॉ. साहब ने तपाक से जवाब दिया, "चलो हिंदी में बोले जिसे हम दोनों ही जानते हैं।"

विदेशी महिला और स्वतंत्रता सेनानी श्रीमती एनीबेसेन्ट प्रतिवर्ष नागरी प्रचारिणी सभा को 15 रुपये दान करती थी। इसी प्रकार श्री गोपाल कृष्ण गोखले भी प्रतिवर्ष उक्त सभा को सदस्यता की रकम भेजते थे। सर तेग बहादुर स्प्रू जो भारत के सर्वोच्च एडवोकेटों में थे हजारों रुपये उक्त सभा को भेजते थे।

जब श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित भारत की राजदूत होकर मास्कों पहुंची तो उन्होंने अपना परिचय पत्र (**Credentials**) रूस के राष्ट्राध्यक्ष को पेश किया। रूस के राष्ट्राध्यक्ष ने परिचय पत्र देखकर बड़े अदब से राजदूत को वापस करते हुए कहा कि आपका परिचय पत्र न तो आपकी भाषा में है और न हमारी। स्मरण रहे कि यह परिचय पत्र अंग्रेजी में पेश किया गया था। श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ने तत्काल भारत के प्रधानमंत्री से सम्पर्क किया और तत्काल उसका हिंदी रूपांतर कर भिजवाने के लिए कहा। पर इससे भी आश्चर्य की बात तब हुई जब हिंदी के परिचय पत्र को देखकर रूस के एक हिंदी भाषा मर्मज्ञ ने उस पत्र में एक शब्द बदलने का सुझाव दिया। सुझाव श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ने भारत के प्रधानमंत्री को भेजा, जिन्होंने तत्काल श्री पुरूषोतम दास टंडन ने परामर्श कर उक्त सुझाव को सहर्ष स्वीकार कर लिया।

इतनी अत्यंत वैज्ञानिक इतनी समृद्ध, इतने करोड़ों लोगों की मातृभाषा का गौरव जिसे प्राप्त है, जिसकी वकालत सहस्राब्दि के युग पुरूष गांधी तक ने की, जिसका इतिहास इतना गरिमा सम्पन्न रहा हो और जिसमें विदेशी शब्दों को पचाने की अद्भुत क्षमता हो। इस भाषा पर हमें निश्चय ही गर्व है। संपूर्ण प्रयास एवं समय से जूझ कर हमनें यह मंजिल पाई है। फिर भी इसका अधिक प्रयोग वांछनीय है।

हिंदी आज चाहती हमसे
हम सब निश्छल अंतस्तल से,
सहज विनम्र अधर यत्नों से
मांगे न्याय आज से कल से

(डा. ल.म. सिंघवीं)

तकनीकी अधिकरी (हिंदी), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली-110001

ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप में हिंदी की उपयुक्तता

—विश्वम्भर प्रसाद 'गुप्त-बन्धु',
एफ. आई. ई.(इं), विशारद (द्विक)

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि ।
मंगलानां च कर्तारां वन्द वाणीविनायकौ ॥
(तुलसीदास)

गोस्वामी तुलसीदास जी रामचरित मानस के आरम्भ में ही वाणी-विनायक की वन्दना करते हुए वर्णों (अक्षरों) का स्मरण करते हैं जिनके कर्ता वाणी और विनायक हैं—वाणी (वाग्देवी), जो भाषा (वर्णों के समूह) का उद्‌गम हैं और विनायक (लिपिक देवता), जो उनको अमूर्त (अक्षर) से मूर्त (लिपि-बद्ध) करते हैं, उनको स्वरूप देते हैं।

गुसाईं जी ने इस मंगलाचरण में वन्दना के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ इंगित कर दिया है। यह भी स्पष्ट कर दिया है कि भांति-भांति के अर्थ, रस, सदभिप्राय और कल्याण, ये सभी वर्णों के साथ-साथ रहते हैं। सभ्यता की भी यही पूर्वापेक्षाएँ हैं और भारत की भारती में, हमारी श्रेष्ठ (आर्य-) भाषा में, उसके अमूर्त रूप वर्णों तथा मूर्त रूप लिपि में भी ये सभी गुण विद्यमान हैं। और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ये सभी गुण संसार की किसी अन्य भाषा में नहीं हैं।

हिंदी कोई-मामूली भाषा नहीं, वरन् एक अत्यन्त सशक्त, समृद्ध और विश्वव्यापी भाषा है। डा. जयन्ती प्रसाद नौटियाल के अनुसार ''हिंदी जानने वालों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है। भाषा जानने वालों की दृष्टि से हिंदी का विश्व में पहिला स्थान है'' (देखिए गृह-मन्त्रालय, भारत-सरकार की पत्रिका 'राजभाषा भारती' का अक्तूबर-दिसम्बर—1997 अंक, पृष्ठ-40) । अब अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की पहिचान हिंदी में होने लगी है। डा. कैलाश चन्द्र भाटिया के अनुसार (देखिए 'क्षितिज', आई.आई.टी. मुम्बई, मार्च 2000 अंक 10 पृष्ठ 40-42), यूनेस्को की मान्यता प्राप्त सात भाषाओं में हिंदी भी है और यह बड़ी तेजी से अन्तरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित हो रही है। विश्व के सैंतीस देशों में एक-सौ तीस विश्वविद्यालयों/संस्थाओं में हिंदी के पठन-पाठन की व्यवस्था है (देखिए गृह मन्त्रालय, भारत सरकार की मासिक पत्रिका राजभाषा पुष्पमाला जनवरी 1998)। विश्व के अड़तालीस देशों में हिंदी के जानकार पर्याप्त संख्या में हैं। यूनिवर्सिटी आफ वाशिंगटन के सन् 1902 के आंकड़ों के आधार पर विश्व में हिंदी की स्थिति प्रथम है (अंग्रेजी तीसरे स्थान पर आती है)। विश्व की छप्पन भाषाओं में भारतीय भाषाएं अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

हिंदी की शानदार विकास-यात्रा

भारत की संस्कृति सबसे पुरानी, सबसे श्रेष्ठ और विश्व-वरणीय है (सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा।—यजुर्वेद 7/14)। यह तत्त्वत: एक योजक मसाला है जो व्यक्ति को व्यक्ति से, परिवार को परिवार से, समाज को समाज से, देश को देश से, राष्ट्र को राष्ट्र से और अंतत: सारे विश्व से—जोड़कर एक करता है और वैदिक परिकल्पना कि समस्त विश्व एक कुटुम्ब, एक-रूप या '**विश्वमार्यम्**' है, साकार कर सकता है। इस श्रेष्ठ संस्कृति की वाहक भाषा संस्कृत है, जो पूर्णतया संस्कारित और सर्वश्रेष्ठ है। यह विश्व की सभी भाषाओं की जननी भी है। उसी संस्कृत का समयानुकूल परिवर्तित रूप हिंदी है, जो '**कृण्वन्तो विश्वमार्यम्**' के उदात्त उद्देश्य की पूर्ति करने के लिए अपेक्षित दिशा में प्रगति कर रही है। संस्कृत की उत्तराधिकारिणी हिंदी अपनी जननी से भी आगे स्थिर गति से कदम बढ़ा रही है।

संस्कृत का व्याकरण इतना गहन और विस्तृत, वैज्ञानिक और व्यवस्थित, ध्वन्यात्मक और सर्वांग—सम्पूर्ण है कि इसका पूरा-पूरा ज्ञान प्राप्त करने के लिए डाक्टरेट स्तर तक का अध्ययन आवश्यक होता है। किन्तु भाषा में इस सीमा तक शुद्धता का प्रवेश होने से यह देवभाषा (विद्वानों की भाषा) बनकर रह गई और जन-सामान्य के लिए दुरुह (अत: उससे दूर) हो गई। भाषा ('भाष्' धातु =बोलना) वही हो सकती है जो बोली जा सके। अत: जन-सामान्य के लिए स्थान-स्थान पर संस्कृत से मिलती-जुलती ही, किन्तु बोली जा सकने

योग्य अलग-अलग लोक-भाषाएं या बोलियां बन गई। पहले पाली, प्राकृत, अपभ्रंश जैसे इनके नाम हुए, फिर धीरे-धीरे और भी विकसित होकर अनेक सम्पन्न और समर्थ भाषाएं बनीं जो क्षेत्र के अनुसार पंजाबी, गुजराती, आदि कहलाईं। फिर थोड़े-थोड़े अलगाव-वाली बहुत सी भाषाओं (या बोलियों) को राष्ट्र की एकता के हित में पुन: विकसित करके विद्वानों ने एक **राष्ट्र-भाषा** 'हिंदी' बनाई। यह आर्य (श्रेष्ठ) भाषा सर्व-गुण-सम्पन्न है, सूक्ष्म से सूक्ष्म और गम्भीर से गम्भीर विचार व्यक्त करने में समर्थ है, और सरल तथा क्लिष्ट सभी प्रयोजन सिद्ध करने के लिए सक्षम है। इसी कारण हिंदी एकता की, विश्व की सामासिक संस्कृति की, और **'एक विश्व नेक विश्व'** बनाने की सर्वाधिक उपयुक्त भाषा बनी है तथा विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर है।

हिंदी के वैज्ञानिक विकास की वानगी उदाहरणार्थ प्रस्तुत है : नए शब्द निर्माण के लिए हिंदी में उपयुक्त अर्थ की अभिव्यक्ति के निमित अलग-अलग उपयुक्त शब्द वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग ने सुझाए हैं :

Absolute acceptance	निरपेक्ष स्वीकृति
Absolute adjective	विशेष्यभूत विशेषण
Absolute agreement	पूर्ण समझौता
Absolute beauty	निरपेक्ष सौन्दर्य
Absolute mistress	स्वाधीनपतिका
Absolute music	निस्संदर्भ संगीत
Absolute ego	पराह
Absolute existence	व्राह्मी स्थिति
Absolute government	निरंकुश शासन
Absolute Indefinite	परम अनिर्वचनीय
Absolute nothingness	आत्यंतिक शून्यता
Absolute spirit	केवल चित्त

किसी भी अपूर्ण/विदेशी भाषा में इतनी सूक्ष्मता और असंदिग्धता नहीं है। प्राय: एक ही शब्द का प्रयोग करके काम चलाया जाता है।

संस्कृत से भी सुधरी हुई भाषा है हिंदी

हिंदी सभी मनीषियों द्वारा पारस्परिक व्यवहार की, आपस में मिलने-जुलने की भाषा के रूप में विकसित होकर एक महान राष्ट्र भारत की राष्ट्रभाषा, राजभाषा, सम्पर्क भाषा, योजक भाषा के आसन पर प्रतिष्ठापित है। यह संस्कृत से भी आवश्यकतानुसार सुधरकर पुष्ट हुई है और सभी प्रकार से 'सुभाषा' कही जाने की अधिकारिणी है। संस्कृत से भी सुधरी हुई भाषा है हिंदी। जैसे, 'संस्कृत के 'देवर' शब्द का अर्थ है 'पति का भाई' (जेठा या छोटा)। महाभारत के बाद भारतीय संस्कृति में आए परिवर्तन के फलस्वरूप, नियोग के लिए केवल छोटा भाई उपयुक्त समझा जाता है, जेठा वर्ज्य है (तुलना कीजिए : 'अनुज-वधू, भगिनी, सुत-नारी : सुनु शठ कन्या सम ये चारी; इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकइ जोई;' ताहि बधे कछु पाप न होई'-मानस)। अतएव हिंदी में पति का छोटा भाई ही 'देवर' होता है; बड़ा भाई देवर नहीं 'जेठ' कहलाता है (तुलना कीजिए 'जेठ स्वामि, सेवक लघु भ्राता')।

इसी प्रकार व्याकरण में 'लिंग' और 'वचन' के प्रकरण भी हिंदी में सुधरे हुए हैं। उदाहरण के लिए 'ते' सर्वनाम पुल्लिंग में बहुवचन है किन्तु स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग में द्विवचन है, और इनके विशेष्य (पूर्वपद, antecedent) दूर होने पर तात्पर्य समझना कठिन होता है संस्कृत में संख्यावाची शब्द 'एक' सदा एकवचन, 'द्वि' सदा द्विवचन, 'त्रि' सदा बहुवचन, और 'चतुर' भी सदा बहुवचन होते हैं, किन्तु इन सभी के तीनों लिंगों में अलग-अलग रूप होते हैं, जबकि विंशति (20) से आगे केवल एकवचन में ही और सदा स्त्रीलिंग में ही रूप होते हैं। संस्कृत में 'लोक' एक वचन है (लोकस्तदनुवर्तते'—गीता 3/21) किन्तु इसी अर्थ में हिंदी शब्द 'लोग' बहुवचन होता है, क्योंकि 'लोग' का प्रयोग समूह के लिए होता है (अंग्रेजी का Collective noun)। हिंदी ऐसी विसंगति या जटिलताओं से नुक्त होकर श्रेष्ठ विश्वभाषा बनी है। संस्कृत में ह्रस्व 'ऋ' के साथ दीर्घ 'ॠ' भी एक स्वर है जिसका प्रयोग प्राय: शब्दों के बहुवचन रूप बनाने में होता है। हिंदी में बहुवचन बनाने की प्रणाली ही बदली हुई है जिससे 'ॠ' की आवश्यकता ही वर्णमाला में नहीं रही और प्रणाली भी सरल हो गई है। ऌ और ॡ भी हिंदी में नहीं रखे गए।

विश्व की भाषाओं की आदि-जननी संस्कृत

संसार में मनुष्य ही स्रष्टा की सर्वोत्तम कृति है। सन्त ज्ञानदेव के शब्दों में "यह एक भाषायी प्राणी है। भाषा ही मनुष्य को पशु-जगत से भिन्न बनाती है।....भाषा के बिना मनुष्य पशुत्व की विरासत से मुक्त होकर यत्किंचित् भी सांस्कृतिक जीव नहीं बन पाता।" विद्वान् मानते हैं कि मनुष्य

729 HA/03—3A

की आदि भाषा 'संस्कृत' ही है जिसका प्रकाश सारे संसार में फैला। मनुस्मृति के अनुसार ''संस्कृत नाम देवीवागन्वाख्याता महर्षिभि :—अर्थात् संस्कृत एक देवी भाषा है जो महर्षियों द्वारा व्युत्पादित है, संस्कार-विशिष्ट बनाई गई है, अथवा संस्कृत की गई है (तभी यह संस्कृत कहलाई)''। भाषा-वैज्ञानिक मानते हैं कि संसार की प्राय: सभी सभ्य भाषाओं की आदि-जननी संस्कृत ही है। उन सब में विद्यमान बहुत से शब्दों के संस्कृत मूल तो स्पष्ट दिखाई देते हैं। उदाहरणार्थ संस्कृत के ही पितृ (पिता), मातृ (माता), भ्रातृ (भ्राता) आदि चलकर देश-काल-भेद से फारस पहुंचे तो पिदर, मादर,बिरादर बन गए। गान्धार-सहित भारत को छूता हुआ देश होने से फारस-'स्पर्श' देश कहलाता था तथा आर्यों के रहने से आर्यन या ईरान भी हो गया। आगे चलकर वे ही शब्द सैक्सोनी (उत्तर-जर्मनी) में पोडर, मोयडर, ब्रोडर, जर्मनी में वेटर, मुटर, बुडर; लैटिन (प्राचीन रोम) में पेटर, मेटर, फ्रेटर; इटली में पेटर, मेटर, फ्रेटर; और इंग्लैण्ड में पहुंचकर फादर, मदर, ब्रदर आदि हो गए। चलते-चलते मानव की निम्नगा प्रकृति के कारण सभी भाषाएं अपभ्रंश होती गईं, जबकि संस्कृत से पोषण और विकास प्राप्त करती हुई हिंदी की श्रेष्ठता बरकरार रही। अब तो इस पर विदेशी विद्वान भी मुग्ध हैं।

हिंदी की आभासी अक्षमता

प्रखर राष्ट्रवादी दिनकर ने विश्व-मैत्री, विश्व-बन्धुत्व, विश्व-शान्ति आदि भारतीय संस्कृति की तमाम प्रमुख विशेषताएं और अपेक्षाएँ गिनाकर भारत के रूप में 'मानवता के इस ललाट-चन्दन को नमन' किया है। भारत, भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीय एकता के इसी निर्विवाद तथ्यात्मक सम्बन्ध को भारत के उच्चतम न्यायालय ने भी प्रदीप जैन मामले में अपने निर्णय में स्वीकारा है। इसका श्रेय भारत की सुसंस्कृत राष्ट्र-भाषा हिंदी को ही है। फिर भी हिंदी पर भांति-भांति की अक्षमताएँ, यथा 'देश विखर जाएगा', 'ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में पिछड़ जाएगा' आदि थोपी जाती हैं। इसका कारण है हिंदी से भली भाँति परिचय न होना और जाने-अनजाने उसकी क्षमता-सम्बन्धी तथ्यों की उपेक्षा। दो-तीन उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाएगा कि हिंदी सरल, सर्वथा सक्षम और पूर्णतया वैज्ञानिक है।

(1) 'श', 'ष', 'स' तीनों में ध्वनि-मूलक अन्तर बहुत कम है; फिर भी वर्ण-रूप तीन हैं। अंग्रेजी में सी (कप),सीएच (स्कूल) और के (काइट) की ध्वनियां 'क'-जैसी हैं जो एक दोष समझा जाता है। किन्तु हिंदी में यह दोष क्यों न समझा जाए? तीन वर्णों के बजाय एक ही वर्ण से काम क्यों न चलाया जाए? इनका उत्तर वही दे सकता है जो इन तीनों के प्रयोग से शब्द के अर्थ में होने वाला अन्तर समझता है। जैसे 'विश' (प्रवेश या आवेश के अर्थ में), 'विष' (जहर के अर्थ में और 'विस' (कमल-नाल के अर्थ में) स्पष्टत: अलग-अलग शब्द हैं; 'सकृत' और 'शकृत' के अर्थों में भी अन्तर है। ये भी समानार्थी नहीं हैं। 'श', 'ष', 'स' का उच्चारण भी अलग-अलग, क्रमश: तालु, मूर्द्धा और दांतों के सहयोग से होता है। इसी प्रकार विशय (=संदेह, आश्रय, मध्यय); विषय (=इन्द्रियार्थ, भौतिक पदार्थ, कार-बार, लक्ष्य, क्षेत्र, स्थान, प्रकरण, प्रसंग आदि) और विसय (=विसयना 'क्रियां', अस्त होना) समानार्थक नहीं हैं।

(2) 'क्र' संयुक्ताक्षर और 'कृ' (ह्रस्व ऋ की मात्रा-युक्त क्) का भेद भी गलत समझ के कारण दोष कह दिया जाता है। 'कृपा' ('क्रिपा' गलत है), 'क्रिया' ('कृया' गलत है) 'सकृत्' ('सक्रित्' गलत है) और 'सुकृत' ('सुक्रित' गलत है), 'सक्रिय' ('सकृय' गलत है) आदि में 'कृ' ह्रस्व 'ऋ' की मात्रा-युक्त 'क्' (एक वर्ण) है। क्रि में ह्रस्व 'इ' की मात्र युक्त 'क्' के साथ 'र्' भी (दो वर्ण) हैं। दोनों वर्ण नियमों के अनुसार साथ ही लगे हुए या अलग हैं। वास्तव में इन शब्दों के उच्चारण के अनुसार रूप हैं : क्रि+या (=क्+र्+इ) + या; और सक्+रि+य (=स+क्+र+इ)+य। अर्थात् 'क्रि' के पहले आने वाला ह्रस्व 'स' भी बलाघात के कारण दो मात्राओं का माना जाता है और दीर्घ बोला जाता है। इसलिए 'क्रि' और 'कृ' को एक-सा मानने की मांग उचित नहीं है। सत्य (=सत्+य) और सत्याग (=स+त्+याग) में 'स' क्रमश: दीर्घ (दो मात्रा) और ह्रस्व (एक ही मात्रा) बोले जाते हैं।

(3) 'इक' प्रत्यय लगाने पर या संज्ञा से विशेषण बनाने पर शब्द के आरम्भ के स्वर में वृद्धि करने की सुस्थापित परिपाटी संस्कृत में है : जैसे, शब्द⟶शाब्दिक; चन्द्र⟶चान्द्र आदि। हिंदी में भी इसका प्रचलन है। स्वर-वृद्धि की परिपाटी में दोहरी वृद्धि भी अपना स्थान बनाती जा रही है। जैसे : विधि⟶विधान; सं+विधि⟶संविधान, सांविधानिक (संवैधानिक भी) शायद बोलने की सुविधा के कारण प्रचलित हैं।

(4) कुछ विद्वान उपरि (संस्कृत)+उक्त=उपर्युक्त को शुद्ध मानते हैं, 'उपरोक्त' को नहीं। उनके अनुसार ऊपर (हिंदी)+उक्त=ऊपरोक्त होना चाहिए। परन्तु 'उपरोक्त' पत्र-

729 HA/03—3B

पत्रिकाओं, अच्छी पुस्तकों में ही नहीं अच्छे शब्द-कोशों में भी स्थान पा चुका है : शायद भाषा (या बोली) बोलने की सुविधा के कारण या स्वर-वृद्धि की भांति स्वर-लाघव की परिपाटी भी व्याकरण में हो या न हो तो पड़ जाए।

ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी

प्रो. एम. जी. के. मेनन ने विज्ञान परिषद प्रयाग में 5 अक्तूबर, 1999 को "विज्ञान का रोमांच" विषय पर भाषण देते हुए कहा था—"गणित की अनेक उपब्धियां, जिनके आविष्कारकर्ता आजकल, पश्चिमी वैज्ञानिक माने जाते हैं, भारतवर्ष में बहुत पहले से ज्ञात थीं। भारत में खगोल-विज्ञान, रसायन-विज्ञान, धातु-विज्ञान, पादप-विज्ञान में कई आविष्कार हुए। भारतीय दर्शन के अंग के रूप में तर्क, भाषा-विज्ञान और व्याकरण के अति परिष्कृत पहलुओं पर शोध हुए। बारहवीं से अठारहवीं सदी के बीच केवल 600 वर्षों में भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर 10 हजार से अधिक पुस्तकें लिखी गई। भारत की पाण्डुलिपियों का अनुवाद अरबी और फारसी में हुआ। बहुतेरा ज्ञान भारत से बाहर भी गया।" वास्तव में सभ्यता का प्रारम्भ सर्वप्रथम, ईसा से भी हजारों साल पहले, भारत में ही हुआ था। संसार का प्रथम विश्वविद्यालय तक्षशिला में ईसा से 700 वर्ष पूर्व स्थापित हुआ था जिसमें संसार भर के 10,500 से अधिक विद्यार्थी 60 से अधिक विषयों का अध्ययन करते थे। ईसा-पूर्व चौथी शती में स्थापित नालन्दा विश्वविद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में प्राचीन भारत की महानतम उपलब्धि थी।

मनुष्य को ज्ञात चिकित्सा का सर्वप्रथम विज्ञान आयुर्वेद है। आयुर्वेद के पितामह "चरक" ने 2,500 वर्ष पूर्व इस ज्ञान का संकलन किया था। सुश्रुत शल्य-क्रिया के पितामह थे। 2,600 वर्ष पूर्व वे और उनके समय के चिकित्सक जटिल शल्य-क्रियाएँ, तथा प्रसूतज (सीजैरियन), मोतियाबिन्द, कृत्रिमांग, अस्थि-भंग, पथरी और प्लास्टिक शल्य तथा मस्तिष्क की शल्य-क्रियाएं सम्पन्न करते थे। सुनकारियों (अनिस्थीसिया) के प्रयोग से वे भली भांति परिचित थे। शल्य-क्रिया के सवा-सौ से अधिक उपकरणों का प्रयोग करते थे। शरीर-रचना-विज्ञान, शरीर-क्रिया-विज्ञान, निदान-शास्त्र, भ्रूण-विज्ञान, पाचन-क्रिया, चयापचय, आनुवंशिकी और असंक्रामिता सम्बन्धी गहरी जानकारी भी बहुत सी पुस्तकों में मिलती है जिनकी भाषा संस्कृत या भारतीय भाषाएं हैं।

नौचालन की कला का जन्म 6,000 वर्ष पूर्व सिन्धु नदी में हुआ था। संस्कृत शब्द नौगतिः से ही "नैविगेशन" और नौ से ही "नैवी" बने हैं। सिंचाई के लिए बांधों और जलाशयों का निर्माण भी सबसे पहले सौराष्ट्र (भारत) में हुआ था। मोहन-जो-दड़ो और हड़प्पा की खुदाइयों से मिले अवशेषों से भारतीय नगर-नियोजन की उत्कृष्टता प्रकट होती है। उस समय के जो भी अवशेष मिलते हैं, उनसे सिद्ध होता है कि जो कुछ था, विलक्षण प्रतिभा और उत्कृष्ट वास्तु-कौशल से आद्योपान्त परिपूर्ण था। ज्ञात इतिहास-काल की ही कृतियाँ, यथा अजंता-इलौरा की गुफाएँ, देश भर में फैले विशाल मंदिर, विजय-स्तम्भ, चैत्य, स्तूप और स्मारक विश्व में बेजोड़ हैं। पुरातत्त्व-वेत्ता सर जान मार्शल ने लिखा है : शिल्प, वास्तु और भवन-निर्माण की रचनाओं को, जो भारत में जगह-जगह विद्यमान हैं, देखकर कोई भी उनके निर्माताओं के ज्ञान की गहराई, विचारों की ऊँचाई और कला की प्रौढ़ता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। मिहिरावली (दिल्ली) का प्रसिद्ध लौह-स्तंभ न केवल आकार और वजन की दृष्टि से, बल्कि रचना की दृष्टि से भी अद्वितीय है कि एक हजार साल की सर्दी-गर्मी-वर्षा का प्रकोप सहन करने पर भी उसमें अभी तक जंग भी नहीं लगा।

गणित का तो उद्गम-स्थल ही भारत है। अंकों के लिए अरबी शब्द 'हिंदसा' इसका प्रमाण है। बीजगणित, त्रिकोणमति और कलन-गणित (कॅलकुलस) भारत की ही देन हैं। द्विघाती समीकरण श्रीधराचार्य ने ग्यारहवीं शताब्दी में हल किए थे। ईसा से 5,000 वर्ष पूर्व हिन्दू लोग 10 तक की बड़ी संख्याओं का प्रयोग करते थे और उन्होंने उनके अलग-अलग नाम भी दे रखे थे, जबकि यूनानी और रोमन लोगों द्वारा बड़ी से बड़ी 10 तक की संख्याओं का ही प्रयोग होता था और आज भी बड़ी-से-बड़ी 10 तक की संख्याओं का प्रयोग होता है। स्थानीय मान और दाशमिक प्रणाली ईसा से 100 वर्ष पूर्व भारत में विकसित की गई थी।

हिंदी की वर्तमान स्थिति

संविधान के अनुच्छेद 351 में आदेशात्मक स्वर में कहा गया है कि "संघ का यह कर्तव्य होगा कि हिंदी का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो"। तदनुसार संघ सरकार ने केंद्रीय हिंदी निदेशालय, वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, राजभाषा विभाग और राज्यों ने हिंदी अकादमियों आदि की स्थापना करके हिंदी के स्वयम्भू फैलाव को स्वीकृत, सुव्यवस्थित, नियन्त्रित और प्रोत्साहित करते हुए अपने

संविधान-प्रदत्त दायित्व के निर्वाह का पूरा प्रयास किया। वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य तैयार हुआ है। फलस्वरूप हिंदी विश्व-भाषा बनने योग्य हो गई, भारत की राष्ट्र-भाषा तो यह थी ही, सभी पुरानी रियासतों की राजभाषा भी थी।

वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग अत्यंत सुव्यवस्थित ढंग से हिंदी को समृद्ध करता रहा है। सन् 2000 तक इसने विभिन्न वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों की अड़तीस शब्दावलियां और शब्द-संग्रह; तथा पचपन विषयों के परिभाषा कोश प्रकाशित किए हैं। किसी-किसी विषय के परिभाषा कोश तो इतने वृहद् हैं कि उनके दो-दो, तीन-तीन खण्ड करके प्रकाशित करने पड़े हैं। वनस्पति-विज्ञान परिभाषा-कोश के चार खण्ड हैं।

विश्वविद्यालयों में पढ़ाई भी हिंदी में होने लगी है। वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों की पढ़ाई हिंदी में करने के लिए आवश्यक पुस्तकें भी उनके हिंदी प्रकोष्ठों में तैयार होती हैं जिनमें वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित शब्दावलियों का उपयोग किया जाता है, भले ही पढ़ाई का माध्यम वहाँ की राजभाषा हो क्योंकि शब्दावलियां सभी भारतीय भाषाओं में प्रयोग के लिए हैं। कई विश्वविद्यालयों में अलग विभाग ही प्रयोजन-मूलक हिंदी के लिए खुले हैं। हिंदी-भाषी राज्यों में विश्वविद्यालयों के हिंदी प्रकोष्ठों के अतिरिक्त नौ हिंदी ग्रन्थ अकादमियां भी हैं। भारत सरकार के प्रकाशन विभाग ने इस सारे साहित्य की बिक्री के लिए देश में सात बिक्री केन्द्र खोले हैं।

वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान परिषद् (सी.एस.आई.आर.) नई दिल्ली ने 1966-1980 की अवधि में प्रकाशित हिंदी वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकाशनों की निर्देशिका तैयार की थी। उसमें 3344 पुस्तकों और लगभग 320 पत्रिकाओं की प्रविष्टियाँ थीं। इसमें शुद्ध विज्ञान के दस वर्गों की, प्रौद्योगिकी के नौ वर्गों की हिंदी ब्रेल लिपि की वैज्ञानिक पुस्तकों की सूची, लेखक-सूची, प्रकाशक-सूची और विषय वर्गीकरण के अन्तर्गत सारी जानकारी दी गई है। वैज्ञानिक और तकनीकी पत्र-पत्रिकाओं की सूची दस वर्गों के अन्तर्गत है। 1980 के बाद के दशकों में हिंदी के प्रसार और प्रयोग में और भी अधिक तेज़ी से वृद्धि हुई। निदान वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान परिषद् ने 2001 में एक संशोधित निर्देशिका प्रकाशित की। इसमें ग्रन्थ संख्या भी लगभग दुगुनी हो गई।

उपसंहार

सूचना-प्रौद्योगिकी (आईटी.) का जाल भारत में भी फैल रहा है। यह कम्प्यूटर का युग है। कम्प्यूटर के आविष्कर्ता संस्कृत/हिंदी को कम्प्यूटर में प्रयोग के लिए सबसे अधिक उपयुक्त भाषा मानते हैं और आशुलिपि के आविष्कारक सर आइज़क पिटमैन तो हिंदी की लिपि देवनागरी पर मुग्ध होकर कहते हैं कि यह दुनिया में सभी लिपियों से अधिक वैज्ञानिक तथा पूर्ण है। निरपेक्ष भाव से तथ्यों को देखते हुए तो यह कहना कि हिंदी में ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा के साधन नहीं हैं या हिंदी भाषा ही तकनीकी कार्य/शिक्षा के लिए समर्थ नहीं है, बिल्कुल गलत है। यह या तो अज्ञानवश अथवा जान-बूझकर किया हुआ हिंदी विरोधियों का दुष्प्रचार है जिस पर ध्यान न देना चाहिए।

इत्यलम्।

बी-154 लोक विहार, पीतमपुरा, दिल्ली-110034

उत्पादकता में हिंदी का महत्व

—डॉ. आलोक कुमार रस्तोगी

औद्योगीकरण के साथ-साथ उत्पादकता की संकल्पना ने जन्म लिया। उत्पादकता का तात्पर्य किसी निर्माणी/कल कारखाने में निर्मित वस्तुओं से है। समय के साथ-साथ इस संकल्पना में भी परिवर्तन आया। वैचारिक मान्यताओं और संकल्पनाओं ने चिन्तन के क्षेत्र में नए आयामों को जन्म दिया, फलत : प्रबंधन जैसी वैचाराभिव्यक्ति को बल मिला जिसके कारण उत्पादकता अब केवल कलकारखानों में ही सीमित नहीं रही बल्कि इसका विस्तार कर्मशालाओं, बैंकों और कार्यालयों तक होने लगा। वैश्वीकरण ने इसमें अपना सार्थक सहयोग दिया।

कार्य समय को व्यर्थ न जाने देना किसी भी वस्तु, पदार्थ, सेवा के अपव्यय को रोकना उत्पादकता है। लेकिन यह उत्पादकता की सीमा नहीं है बल्कि ''गुणवता'' ने उत्पादन की उत्पादकता में चार चांद लगा दिए हैं। गुणवत्ता के साथ उत्पादकता ने नयी कार्य संस्कृति को बढ़ावा दिया।

''समय'' ने भी इसमें अपना सहयोग प्रदान किया। बेहतर गुणवत्ता के साथ अधिक उत्पादन, टिकाऊपन ने उत्पादों के मध्य प्रतिस्पर्द्धा को जन्म दिया। ज्यों-ज्यों एकाधिकार खत्म होता गया त्यों-त्यों प्रतिस्पर्द्धा बढ़ने लगी। यह प्रतिस्पर्द्धा आज उपभोक्ताओं/ग्राहकों को लुभाने, अपनी ओर आकर्षित करने के लिए नवीनतम और यथासंभव श्रेष्ठतम/विधियां अपना रहे हैं।

वर्तमान प्रतिस्पर्द्धा ने उत्पादकता को बेहतर गुणवता, टिकाउपन तक ही सीमित नहीं किया, बल्कि बिक्री -उपरान्त सेवा ने भी प्रतिस्पर्द्धा को नए आयाम दिए । बिक्री उपरान्त सेवा में भी कल-पूर्जों को नि.शुल्क बदलना, सेवा लागत न लेना, तत्काल सेवा सुलभ कराना भी शामिल है। ग्राहकों की शिकायतों एवं सुझावों पर तत्काल ध्यान देना उत्पादकता को समृद्ध बनाना हैं।

एक समय था जब उत्पादक निर्माता अपनी इच्छानुसार कच्चे माल, श्रम आदि की सुलभता के अनुसार उत्पादन किया करता था, लेकिन वर्तमान दौर में ग्राहकों की आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के अनुरूप उत्पादन किया जाता है। क्या चाहिए-उपलब्ध है। घरेलू आटा चक्कीओं या दही जमाने का बर्तन।

उत्पादकता—गुणवत्ता और ग्राहक के बिना अधूरी है। हम अपनी गुणवत्ता उत्पादकता को भी समुचित स्तर पर कैश करने में सफल नहीं हो पाते हैं। वैश्वीकरण के इस युग में विश्व-व्यापार में भारत का हिस्सा भी नहीं है। वर्ष 1991 से यह मात्र आधा प्रतिशत रह गया है जिसमें हीरे, जवाहरात, चमड़े की वस्तुओं और सूती वस्त्रों की प्रमुख हिस्सेदारी है। विश्व जनसंख्या का 1/6 भाग वाला भारत, खनिज संपदा से समृद्ध होने के बावजूद अभी भी विकासशील है। इसका कारण उत्पादकता नहीं बल्कि गुणवत्ता है। विश्व बाजार में टिकने, अपना स्थान बनाने के लिए ग्राहक की जरूरतों पर ध्यान देने तथा गुणवत्ता को बेहतर बनाने के साथ-साथ मूल्यों को भी नियंत्रित करना जरूरी है। इसी के साथ-साथ समुचित स्तर पर बेहतर प्रचार-प्रसार भी अपरिहार्य है।

लागत, मूल्य नियंत्रित करने के लिए बेहतर समय प्रबंधन, के साथ-साथ श्रेष्ठ कार्य संस्कृति भी अनिवार्य है। उदाहरण के लिए आज बाजार में एक रुपए से लेकर 100/-रु. तक के बाल पेन उपलब्ध है। बिक्री की दृष्टि से 1-5 रुपए मूल्य तक के पेनों और 80-100/-रुपए मूल्य तक के पैनों की बिक्री में विशेष अंतर नहीं हैं जबकि 100/-रुपए मूल्य का पैन आकर्षक भी नहीं है फिर भी खूब बिकता है। कारण उसका फ्लो, दागरहित स्याही, 2-4 बार गिरने पर न टूटना।

मूल्य की अधिकता, देखने में अत्यधिक चमक-दमक न होने के बावजूद मंहगे पेन को अपनाया जा रहा है। क्या कारण है विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि यहां गुणवत्ता का मानकीकरण हुआ है। मानकीकरण के कारण वस्तु सदैव, न्यूनतम विचलन के साथ, एक जैसी रहती है। उत्पादकता के साथ जिस तरह गुणवत्ता, और उपयोगिता जुड़े हुए हैं उसी तरह प्रतिस्पर्द्धा में बने रहने, ग्राहक, उपभोक्ता के मन में वस्तु विशेष/मार्का विशेष के प्रति लगन /मोह बनाए रखने के लिए उसका मानक निष्पादन भी देते रहना भी जरूरी है।

इन सबके साथ-साथ उत्पादकता के साथ एक और नयी संकल्पना जुड़ गयी है। वह है कि किसी भी उत्पाद को

खरीदने के बाद उपभोक्ता ग्राहक में उसके प्रति संतोष नहीं बल्कि सुखानुभूति हो, उसे खरीद कर उसे पश्चाताप नहीं बल्कि गर्व की अनुभूति, सुख की अनुभूति हो। अब उत्पादकता का लक्ष्य उपभोक्ता की सुखानुभूति है, यह सुखानुभूति बेहतर गुणवता, टिकाऊपन, प्रतिस्पर्द्धात्मक मूल्य उपरान्त त्वरित संतोषप्रद सेवा, मानकीकरण के उपरान्त प्राप्त होती है।

किसी वस्तु के उत्पादन, सेवा के दौरान कुछ उपव्यय कुछ रिजेक्शन होता है, कुछ वस्तुएं बच जाती हैं, कुछ अनुपयोगी हो जाती हैं। जो संस्थान "अपव्यय" को नियंत्रित कर लेते हैं वे अपनी उत्पादन की लागत को घटा लेते हैं क्योंकि अपव्यय/रिजेक्शन पर नियंत्रण भी उत्पादन है। कुछ अनुपयोगी वस्तुओं का पुर्नप्रयोग तकनीक अपना कर फिर से प्रयोग कर लेने से उत्पादकता पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। यह "रि-साइकिलिंग" प्राकृतिक संसाधनों को दीर्घकाल तक बनाए रखने में सहयोगी है।

इसी के साथ-साथ अब उत्पादकता पर्यावरण से भी सम्बद्ध हो रही है। हमारे पर्यावरण और स्वच्छ परिवेश पर किसी भी सेवा, उत्पादन का विपरीत प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए । पर्यावरण-विरोधी उत्पादन के प्रति आकर्षण घट रहा है। जो संस्थान कार्यालय, उत्पादक इकाईयाँ इन तथ्यों के प्रति सजग रहेंगी, सतर्क रहकर अपने ग्राहकों को संतुष्ट करेंगी, वे नि: संदेह इस प्रतिस्पर्द्धात्मक युग में आगे बढ़ती ही जाएंगी। ग्राहक की सुखानुभूति को लक्ष्य बनाकर उत्पादकता को समर्पित इकाई का उत्पाद/उसकी सेवा नि:संदेह बेहतर होगी और बाजार में अपना स्थान बनाने में सफल होगी।

प्रत्येक संस्थान के उत्पादन/सेवा में उसके कर्मचारी-श्रमिक महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। इन बहुसंख्यक कर्मचारियों से संवाद इनकी भाषा हिंदी में करने से उन्हें मशीन का सुरक्षित प्रचालन, न्यून निरस्त्रीकरण, आदि में महत्वपूर्ण सहायता तो मिलती ही है, साथ ही साथ वे ग्राहक को भी संतुष्ट करने में सफल रहते है। विदेशी भाषा के स्थान पर अपनी भाषा में, बहुसंख्य श्रमिकों की भाषा में दी गई हिदायतों से कामगारों पर सार्थक प्रभाव पड़ता हैं जो अंततोगत्वा उत्पादन एवं उत्पादकता वृद्धि में सहायक होता है।

जिला प्रदेश, राष्ट्र कोई छोटी सी जगह नहीं है अपनी वस्तु, उत्पाद, सेवा को बेचने के लिए ग्राहक और उपभोक्ता को ढूंढना, उन्हें आकर्षित करना होता है। वैश्वीकरण के दौर में इसका फलक तो और भी व्यापक हो गया है। फलत: "प्रचार" की संकल्पना को नया कलेवर दिया गया। ढोल-ढपली की रीति नीति अब पुरातन हो गई है और दूरस्थ ग्रामों के लिए ही उपयोग में लाई जा रही है। मीडिया के विभिन्न अंगों, उपांगों ने विभिन्न वस्तुओं के प्रचार में बहुआयामी क्रांति पैदा कर दी है। प्रचार अभियान इतनी कुशलता और रोचकता से संचालित किया जाता है कि गंजा व्यक्ति भी कंधा खरीद लाता है।

यह सफल प्रचार है लेकिन इसे सार्थक मार्केटिंग में परिवर्तित करके 'साख' अर्जित करना जरूरी है। अर्थात् ग्राहक/उपभोक्ता कोई उत्पाद केवल एक बार ही नहीं बल्कि बार-बार खरीदे, सेवा का बार-बार लगातार संतोषप्रद ढंग से लाभ उठाता रहे, इसके लिए जरूरी है कि उत्पादक अथवा सेवा प्रदाता ग्राहक/उपभोक्ता की भाषा में, सहज सम्प्रेषणीय माध्यम को अपनाए। भारतवर्ष में राजभाषा हिंदी सहज संवाद/संचार और सम्प्रेषण का माध्यम है। हमें इसे व्यावसायिक रणनीति का अंग बनाना होगा। इसी के अनुसरण में बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपने उत्पादों का प्रचार/विवरण हिंदी में उपलब्ध कराती हैं क्योंकि वे जन-जन तक अपने उत्पादों, सेवा विवरणों से अवगत कराकर अपनी उत्पादकता के साथ-साथ लाभ प्रदता बढ़ाने और बढ़ाते रहने हेतु प्रयत्नशील है। इसी व्यावसायिक रणनीति के अन्तर्गत ग्राहक सम्मेलन आयोजित किए जाते हैं जिसमें उत्पाद के बारे में उनके सुझाव पर चर्चा, उत्पाद को बेहतर टिकाऊ बनाने संबंधी सुझावों, अनुभवों को अपनाना "गुणवत्ता युक्त उत्पादकता" का नया आयाम है। इन सम्मेलनों में ग्राहक की भाषा, बहुसंख्यकों की भाषा, राजभाषा हिंदी को अपनाकर "उत्पादकता" के शीर्ष पर पहुंचना सहज ही संभव हो सकता है। हमें भी लाभप्रद उत्पादकता पाने के लिए इसी रणनीति को योजनाबद्ध तरीके से बेहतर रूप में अपनाना होगा।

महाभारत में उल्लेख है—स्वै स्वै कर्मण्यभिरत: संसिद्धि लभते नर: अर्थात् अपने-अपने कर्म में लगे रहने वाले ही सफलता पाते हैं। यदि उत्पादकता को लाभप्रदता में परिवर्तित करता है उत्पादन से सम्बद्ध सभी घटकों को अपना-अपना कार्य दक्षतापूर्वक सम्पन्न करना होगा। अन्त में यही कहा जा सकता है कि "प्रतिस्पर्द्धात्मक मूल्य, समय पर उत्पादन की सुलभता, समुचित गुणवत्ता, विक्रय उपरान्त संतोषप्रद सेवा, सहज, सरल भाषा हिंदी में संवाद, संचार लाभप्रदता के साथ उत्पादकता वृद्धि के मूल तत्व है।"

सहायक निदेशक, बैंक नोट मुद्रणालय, देवास (म. प्र.) -455001

सूनी हुई मधुशाला

—कुलदीप कुमार

आधी सदी से अधिक तक छाया रहा आधुनिक साहित्य का बच्चन युग समाप्त हो गया। स्वभाव से अंतर्मुखी डा.बच्चन की रचनाएं आम आदमी की पीड़ा को स्वर देती है। डा. बच्चन का जन्म इलाहाबाद के मध्यम वर्गीय परिवार में 27 नवम्बर, 1907 को हुआ था।

वह विदेश मंत्रालय में 1955 में विशेष कार्याधिकारी (हिंदी) नियुक्त हुए और 10 साल तक इस पद पर काम किया। हिंदी को सरकारी कामकाज की भाषा बनाने के प्रेरक डा. बच्चन ही थे। उन्हे 1966 में राज्यसभा के लिए मनोनीत किया गया। हिंदी साहित्य के प्रतिष्ठित सरस्वती सम्मान के अलावा बच्चन को पद्म भूषण, साहित्य अकादमी, सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार एफ्रो एशियाई राइटर्स कांफ्रेंस का लोटस पुरस्कार और हिंदी साहित्य सम्मेलन का साहित्य वाचस्पति सम्मान मिला।

यूं तो डा. बच्चन ने साहित्य जीवन में पहले-पहल कविताओं से धाक जमाई थी। बाद में 1973 में उन्होंने गद्य का रुख किया और चार खंडों की अपनी आत्मकथा लिखी। ये चार खंड हैं-'क्या भूलूं क्या याद करूं' 'नीड़ का निर्माण फिर' 'बसेरे से दूर' और 'दशद्वार' से 'सोपन तक' । 'दशद्वार' से 'सोपन तक' भारतीय साहित्य की सर्वश्रेष्ठ आत्मकथाओं में से एक मानी जाती है। बच्चन की आत्मकथा 20 साल में लिखी गई और प्रकाशित हुई।

मधुशाला का जब प्रथम संस्करण छपकर आया तभी से हरिवंश राय बच्चन इतने चर्चित हुए कि इनकी मधुशाला हर पाठक की जुबान पर आ गई। आज बच्चन जी हमारे बीच नहीं हैं परन्तु उनकी कृतियां समाज में उनकी याद हमेशा ताजा रखेंगी।

''मेरे शव पर रोए
हो जिसकी आंखों में हाला
आह भरे वह, जो हो सुरभित
मदिरा पीकर मत वाला,
दे मुझको वह कंधा वह जिनके
पद-मद डगमग होते हो
और जलूं मैं उस ठौर, जहां कभी रही हो
मधुशाला।''

''मेरे जीवन का एक अध्याय बंद होता है, वह खुलता है''। यह शब्द हैं डा. हरिवंश राय बच्चन के जो उन्होंने अपनी आत्मकथा '' बसेरे से दूर'' में व्यक्त किए हैं। 7 जुलाई, 1977 को बच्चन ने पाठकों से विदा ली थी जिसमें उन्होने लिखा था कि पाठकों, यह अवसर नहीं कि आप से विदा ले लूं? आप ने मेरी आत्म कथा बड़े धैर्य से सुनी, आपका धैर्य टूटे, उसके पूर्व मुझे उसे समाप्त कर देना चाहिए, कथा कहने की कोई कला है तो यह उसका सबसे बड़ा गुरू है। इसके बाद आत्मकथा के चौथे खण्ड '' दश द्वार '' से ''सोपान'' तक के बाद विदा ली।

एक कविता में बच्चन जी ने कहा था।

''अभागे जो ज्यादा दिन जीते
उनका नशा उतरता
उनकी आंखों से पर्दा हटता
औ' जीवन की कटु, कठोर सच्चाई उनके
आगे आती।
मोह-भंग करना ही तो है काम वक्त का।''

और वक्त का यह प्रभाव जीवन भी जानता है, कला भी जानती है। कुछ.लोग ऐसे हो सकते हैं कि जीवन से मोह भंग होने के बाद कला से मोह बनाए रहें। बच्चन जी ने जब ''बसेरे से दूर'' समाप्त की थी तभी उन्होंने अपने पाठकों से क्षमा मांग ली थी। क्षमा इसलिए कि पाठकों ने इनकी रचनाओं को खूब सराहा, आत्म कथा तो इतनी सशक्त और सुंदर लिखी जिस पर के. के. बिड़ला फाऊंडेशन ने इन्हें सरस्वती सम्मान से नवाजा।

वर्तमान हिंदी कविता को श्रेष्ठम विश्व- सहित्य के समकक्ष लाने में जिन कवियों का योगदान हुआ है, उनमें बच्चन का एक विशिष्ठ स्थान है। बच्चन की कविता

अलंकार रहित है। कहीं भी उसमें शब्दों के साथ खिलवाड़ नहीं किया गया है। वह विशुद्ध रूप से भावना की अभिव्यक्ति है और उसमें एक मोहक संगीत है। बच्चन जी ने लोकप्रिय होते हुए भी कभी लोकप्रियता पाने की कोशिश नहीं की। उनमें अगाध पांडित्य झलकता था, इसलिए वह अपनी हर मुहिम में सफल रहे। हिंदी की सेवा करते हुए उन्होंने लेखनी से अपने आलोचकों को जो जबाव दिया वह अपने आप में अविस्मरणीय है। उसका कोई जोर नहीं है। लेखन में उनकी ईमानदारी और सशक्त कलम का कोई सानी नहीं है।

डा. बच्चन ने सरल लेकिन चुभते शब्दों में सांम्प्रदायिकता पर फटकार लगाई है। शराब को जीवन की उपमा देकर उन्होंने मधुशाला के माध्यम से एक जुटता की सीख दी। कभी उन्होंने हिंदू और मुस्लमान के बीच बढ़ती कटुता पर कहा,

''मुसलमान और हिंदू हैं दो
एक मगर उनका प्याला
एक मगर उनका मदिरालय
एक मगर उनकी हाला
दोनों रहते एक न जब तक मंदिर-मस्जिद में जाते।
मंदिर मस्जिद वैर कराते, मेल कराती मधुशाला।''

अमिताभ बच्चन ने अपने पिता के 94वें जन्म दिन पर एक पत्रिका के लेख में लिखा भी था ''मेरा जानना है कि पूरी 'मधुशाला' सिर्फ मदिरा के बारे में नहीं, अपितु जीवन के बारे में भी है।'' हालावाद दरअसल यह बताता है कि मदिरा और अन्य तत्वों को हटाकर जीवन को किस तरह समझा जा सकता है।

''एक बरस में एक बार ही जलती है होली की ज्वाला
एक बार ही लगती बाजी जलती दीपों की माला
दुनिया वालो किन्तु किसी दिन आ मदिरालय में देखें
दिन को होती रात दिवाली रोज मनाती मधुशाला।''

यहाँ उन्होंने मदिरा को एक प्रतीक के रूप में लिया है, जिसमें मधुशाला जीवन और रात एक उत्सव है। इसी तरह जीवन के मूल सिद्धांतों पर भी मधुशाला के माध्यम से रोशनी डाली गई है कि किस तरह आप एक राह पकड़ कर अपनी मंजिल हांसिल कर सकते हैं।

पिछली सदी के चौथे दशक का जमाना एक प्रकार से घोर निराशा और वैफल्य का जमाना रहा। छायावाद को नैतिकता वादियों ने तरह-तरह से अनुशासित किया, प्रसाद के रूप में 'आंसू' को बदलना पड़ा । महादेवी 'नीर भरी दुख की बदली' बनने को मजबूर हुई। पंत अध्यातम को हो लिए। इस दौर के ऐन बीच और इसके बाद जिस एक कवि ने हिंदी साहित्य की परम नैतिकतावादी दृष्टि को झकझोरा, वह बच्चन थे, जिनकी कविता में आधुनिक श्रृंगार, प्रेम भाव का उन्मत्तपन और सर्वोपरि 'मधु' भाव की अनिर्णयता ने एक ऐसी पीढ़ी तैयार कर दी जो 'मधुशाला' की मुरीद बन गई। बच्चन की कविता में 'मधु' एक दार्शनिक स्तर का पद है जो बार-बार आता है। 'मधुशाला' कभी समाज का, कभी देश का, कभी आजादी का, कभी अकेलेपन का रूपक बनती है। 'मंदिर मस्जिद बैर कराते, मेल कराती मधुशाला' जैसी पंक्तियां आज तो और भी सनसनीखेज नजर आती हैं। मधुशाला की अद्‌भुत लयात्मकता उसे एक ऐसा महागीत बनाती है जिसे उसकी लय में खोकर ही गाया जा सकता है। बच्चन ने झूमना और झूमकर गाना सिखाया। नैतिकता के बंधनों को तोड़ा। मनुष्य को आजाद उड़ना सिखाया। यह छायावाद के उत्तरकाल का अवदान रहा।

सहजता और संवेदनशीलता उनकी कविता का विशेष गुण माना गया। उन्होंने निर्भीकता के साथ धैर्य और सच्चाई में अपनी सीधी-सीधी भाषा और शैली में सहज और कल्पनाशीलता से ओतप्रोत कविताएं लिखीं। उन्होंने जीवंत बिंबों को सजा कर हिंदी को कई ऐसे अनूठे गीत दिए जो आज भी हिंदी काव्य को समृद्ध कर रहे हैं।

''दृग देख जहां तक पाते हैं, तम का सागर लहराता है,
फिर भी उस पार खड़ा कोई हम सबको खींच बुलाता है
मैं आज चला, तुम आओगी कल, परसों सब संगी-साथी,
दुनिया रोती-धोती रहती, जिसको जाना है, जाता है,
मेरा तो होता मन डग-मग तट के ही हलकोरों से,
जब मैं एकाकी पहुंचूंगा मंझधार, न जाने क्या होगा!
इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा।''

बच्चन जी का ऐतिहासिक और काव्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। कविता प्रेम, सुख, दुख, आशा, निराशा का माध्यम है जिसे उन्होंने कविता में वस्तु और भाषा के स्तर पर लौकिक रूप से पेश किया, कविता को एक नई दिशा दी। बच्चन जी के गीत काफी महत्वपूर्ण हैं। इनका गद्य उत्कृष्ट रहा, आत्मकथा को ऊंचाई दी, जिस कारण इनकी आत्मकथा हिंदी की सर्वश्रेष्ठ आत्मकथा है। इसमें जीवन के सुख-दुख आदि सभी समस्याओं को व्यक्त किया है—

''जो बीत गई सो बात गई
जीवन में एक सितारा था
माना वो बेहद प्यारा था
वह डूब गया तो डूब गया,
अंबर के आनन को देखा
कितने इसके तारे टूटे
कितने इसके प्यारे छूटे
जो छूट गए फिर कहां मिले,
कब अंबर शोक मनाता है।
जो बीत गई सो बात गई!''

वयोवृद्ध साहित्यकार एवं जन-जन के कवि डा. बच्चन के देहावसान से हिंदी साहित्य के जगत को गहरा आघात पहुंचा है। उनकी वाणी में सरसता व सहजता व्याप्त थी, जिसने जनसाधारण का हिंदी भाषा के साथ जोड़ने का प्रयास किया।

आज के परिवेश में क्या यह बात चौंकाने वाली ही नहीं लगती कि 'मधुशाला' सरीखी चर्चित रचना लिखने वाले बच्चन के कैंब्रिज में विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में पीएचडी की थी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेजी का प्रवक्ता रहने और कैंब्रिज से अंग्रेजी में पीएचडी करने के बाद भी उनका न सिर्फ हिंदी साहित्य सृजन में रत रहना, बल्कि अपने बच्चों को भी भारतीय संस्कृति व हिंदी भाषा के संस्कार देना इसी बात का प्रमाण है कि वे सही अर्थों में अपनी जमीन से जुड़े थे। यह भी डा. हरिवंश राय बच्चन के ही संस्कारों का परिणाम रहा कि लोकप्रियता के नए-नए मानदंड स्थापित करने वाले उनके पुत्र अमिताभ बच्चन खुद अपने पिता को सदैव महान और प्रेरणा-स्त्रोत बताते रहे। एक कवि के रूप में हरिवंश राय बच्चन अगर अपनी कृति 'मधुशाला' के लिए याद रखे जायेंगे तो एक पिता के रूप में अमिताभ बच्चन सरीखे संस्कारवान पुत्र के लिए भी याद किए जाते रहेंगे, जिसने इस कलियुग में भी त्रेतायुग की श्रवण कुमार द्वारा माता-पिता सेवा की कथा को साकार कर दिखाया। अंत में डा. बच्चन की मधुशाला से ही दो पंक्तियां :

"यह अंतिम बेहोशी, अंतिम साकी, अंतिम प्याला,
पथिक प्यार से पीना इसको फिर न मिलेगी मधुशाला।''

एन-128, प्लाट नं. 29, रामकृष्णा विहार, पटपड़गंज, दिल्ली-110092

729 HA/03—4A

गांधी और मार्क्स की छाप थी 'सुमन' की रचनाओं में

—सुषमा रानी

हिंदी के प्रख्यात साहित्यकार और आलोचक डा. शिवमंगल सिंह सुमन का जन्म उत्तर प्रदेश में उन्नाव जिले के झगड़पुर गांव में 5 अगस्त, 1915 का हुआ था।

हिंदू विश्वविद्यालय से हिंदी में एम. ए. और पी. एच. डी. करने के बाद शिक्षक बन गये। उनका साहित्यिक जीवन 1939 में शुरू हुआ जब उनका पहला काव्य संग्रह 'हिल्लोल' प्रकाशित हुआ। 'मिट्टी की बारात', 'वाणी की व्यथा' और 'कटे अंगूठों की बंदरवारें,' जैसी काव्य कृतियों के रचयिता डा. सुमन 1968 से 1978 तक उज्जैन में विक्रम विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। इसके अलावा वह लंबे समय तक उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के उपाध्यक्ष भी रहे। वह नेपाल में भारतीय दूतावास के प्रेस एवं सांस्कृतिक विभाग में भी रहे।

भारत सरकार ने 1974 में उन्हें पद्मश्री से सम्मानित किया। उन्हें 1974 में ही सोवियत भूमि पुरस्कार भी दिया गया। इसके अलावा उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार और भारत भारती पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। डा. सुमन को 1993 में शिखर सम्मान से सम्मानित किया। इसके अलावा उन्हें देव पुरस्कार और कई अन्य पुरस्कार भी दिए गए। भागलपुर विश्वविद्यालय नें 1973 में और जबलपुर विश्वविद्यालय ने 1983 में उन्हें डी. लिट. की मानद उपाधि भी दी।

'जीवन का गान', 'युग का मोल,' 'प्रलय सृजन,' जैसी काव्य रचनाएं देने वाले डा. सुमन एक प्रखर आलोचक भी थे। उन्होंने 'महादेवी की काव्य साधना' और 'गीति काव्य' 'उद्यम और विकास' जैसी आलोचनात्मक पुस्तकें लिखीं। इसके अलावा उन्होंने 'प्रकृति पुरुष कालीदास' नाटक भी लिखा। उन्होंने कई देशों की यात्रा भी की। वह विभिन्न कार्यक्रमों के सिलसिले में केन्या, मारीशस, नेपाल और अफगानिस्तान गए। इसके अलावा उन्होंने सोवियत संघ, फ्रांस, इंग्लैंड, मंगोलिया, आस्ट्रेलिया और कई यूरोपीय देशों की भी यात्रा की।

सुमन जी स्मृतियों का चलता-फिरता कोष थे। उन्हें क्या याद नहीं था। कालिदास, सूर, कबीर, तुलसी, मीरा, गालिब, प्रसाद, पंत, निराला और बच्चन, सभी की पंक्तियां उनके मुख से ऐसे झरती थीं जैसे हरसिंगार के फूल। इतिहास, दर्शन, संस्कृति और राजनीति से जुड़े अनगिनत संस्मरण उन्हें मुखाग्र थे। वे जब बोलने के लिए खड़े होते तो सिर्फ वे ही होते थे। उनके पहले और उनके बाद में भले ही किसी भी कद का वक्ता खड़ा हो, श्रोता जब सभा समाप्त होने पर लौटते थे तो सिर्फ सुमन जी की चर्चा रहती थी। हिंदी साहित्य के पिछले 60—70 वर्ष के साहित्यकारों को याद करें तो सुमन जी अपनी अद्‌भुत वक्तृत्व कला के कारण उन सबमें सबसे आगे, सबसे ऊपर नजर आएंगे। लोगों के आग्रह पर बोलने के लिए खड़े होते तो संदर्भ दाएं-बाएं हो जाते, तब उन लोगों पर बुरी बीतती जिन्होंने सुमन जी को उनके समय में हर विषय पर अधिकार के साथ धारा प्रवाह बोलते सुना था। सुमन जी के संबंध बड़े-बड़े लोगों से थे। यह देखकर साहित्य, संस्कृति, राजनीति सहित सार्वजनिक जीवन में काम करने वाले लोग दांतों तले अंगुलियां दबा लेते थे। उन्हें आश्चर्य होता कि आखिर डा. सुमन किस चीज का नाम है।

सुमन को लोकप्रियता और यश दोनों ही मिले। उनके श्रोता ज्यादा और पाठक कम रहे। उनकी रचना की धारा भी बदलती रही। शिवमंगल सिंह सुमन ने अपनी रचना का आरंभ छायावादी धारा के रूप में किया और फिर वे नागार्जुन, त्रिलोचन और केदारनाथ अग्रवाल की प्रगतिशील धारा के सहज हिस्से बन गए। लेकिन इस धारा के प्रति वे लंबे समय तक प्रतिबद्ध नहीं रह पाए। सुमन ने स्वयं ही कहा है कि उन्होंने सशस्त्र क्रांति की राष्ट्रीयता के द्वार से प्रगतिवाद में प्रवेश पाया लेकिन वह उन्हें बांध नहीं पाया।

शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने महात्मा गांधी के प्रभाव को अंगीकार किया, लेकिन वे मार्क्सवादी चिंतन से भी जुड़े रहे। उनकी एक ओजस्वी कविता का उल्लेख प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने एक बार राष्ट्र के नाम संदेश में लाल किले से किया था।

729 HA/03—4B

'क्या हार में क्या जीत में
किंचित नहीं भयभीत मैं
संघर्ष पथ पर जो मिले यह भी सही
वह भी सही, वरदान मागूंगा नहीं॥'

छायावाद के स्तंभ डॉ० सुमन की 'तूफानों की ओर' कविता आज भी नया जोश भर देती है।

'आज सिंधु ने विष उगला है
लहरों का यौवन मचला है
आज उदय में और सिंधु में
साथ उठा है ज्वार
तूफानों की ओर घुमा दो
नाविक निज पतवार॥'

सामाजिक कल्याण के लिए आजीवन प्रतिबद्ध रहे डॉ० सुमन अपनी कविताओं में विषमता और संत्रास से पैदा हुई वेदना को व्यक्त करते रहे—

'लाचारी है आखिर मैंने ऐसे युग में जन्म लिया है,
जहां सभी ने रूप-सुधा को छोड़ गरल का
पान किया है॥'

अपनी कविता 'मैं बढ़ा ही जा रहा हूं' में वह समाज से पीड़ा, दुविधा और शोषण को मिटाने के लिए अपनी प्रेयसी को भी महत्व नहीं देना चाहता। वह उसे भुल तो नहीं सकता पर समाज में बहने वाले निर्धनों के आंसुओं की तुलना भी उसे चाह भी नहीं सकता। उसके लिए वर्ग भेद मिटाना और समाज में समता लाना अधिक महत्वपूर्ण है। वह निरन्तर आगे बढ़ रहा है ताकि उसे अपने लक्ष्य की पूर्ति हो सके—

'मैं बढ़ा ही जा रहा हूं, पर तुम्हें भूला नहीं हूं।
चल रहा हूं, क्यों कि चलने से थकावट दूर होती,
जल रहा हूं, क्यों कि जलने के तमिस्त्रा चूर होती
गल रहा हूं क्योंकि हलका बोझ हो जाता हृदय का,
ढल रहा हूं क्योंकि ढलकर साथ पा जाता समय का॥
चाहता तो था कि रुक लूं पार्श्व में क्षण-भर तुम्हारे
किन्तु अगणित स्वर बुलाते हैं मुझे बांहें पसारे,
अनसुनी करना उन्हे भारी प्रवचन कापुरूषता
मुंह दिखाने योग्य रखेंगी न मुझको स्वार्थपरता॥'

कवि साम्यवादी व्यवस्था का पोषक है और उसी को समाज में स्थापित कर गरीब-अमीर में भेद मिटाना चाहता है। यह कार्य सरल नहीं है अत: कवि जीवन में बिना आराम किए, निरन्तर परिश्रम करते हुए आगे बढ़ना चाहता है—

'ज्ञात है कब तक टिकेगी यह घड़ी भी संक्रमण की और जीवन में अमर है भूख तन की, भूख मन की, विश्व-व्यापक-वेदना केवल आंख का पानी नहीं है।'

शांति कैसी, छा रही वातावरण में जब उदासी
तृप्ति कैसी, रो रही सारी धरा ही आज प्यासी,
ध्यान तक विश्राम का पथ पर महान् अनर्थ होगा
ऋण ने युग का दे सका तो जन्म लेना व्यर्थ होगा।
इसलिए ही आज युग की आग अपने राग में भर-
गीत नूतन गा रहा हूं, पर तुम्हें भुला नहीं हूं।'

अपनी एक कविता में उन्होंने शोषण के खिलाफ आवाज उठाते हुए कहा कि—

'विस्तृत पथ है मेरे आगे उस पर ही मुझको चलना
है,
चिर शोषित असहायों के संग अत्याचारों को
दलना है॥''

भारतीय दर्शन को रेखांकित करने वाली उनकी एक कविता की पंक्तियां हैं—

'सौ बार बने, सौ बार मिटे
लेकिन मिट्टी अनिश्वर है
मिट्टी गल जाती पर उसका
विश्वास अमर हो जाता है॥'

मानव जीवन में सतत संघर्ष को उसकी पूरी गरिमा के साथ अभिव्यक्त करने वाली उनकी एक कविता की पंक्तियां हैं—

'यदि हलाहल पी सकोगे तो नीलकंठ तुम ही
बनोगे
और मानव गा सकेगा फिर तुम्हारे गीत पल-
पल॥'

वयोवृद्ध साहित्य मनीषी पद्मभूषण डा० शिवमंगल सिंह सुमन का 27 नवम्बर, 2002 को हृदय गति रुक जाने से निधन हो गया। उनका जाना एक युग का विराम है। उनके साथ समय की गति रुक गई है। कहने को डा० सुमन हिंदी साहित्य की छायावादोत्तर प्रगतिशील धारा के शीर्षस्थ कवियों में से एक थे। लेकिन उनका यह परिचय उतना ही अप्रमाणिक है जितना कि कोई अरण्य में प्रवेश के द्वार पर लगे तुलसी के चौबारे को देखे और पूरे अरण्य की व्याख्या कर डाले। वह यदि भीतर की ओर जाएगा तो उसे पता चलेगा कि कितनी तरह के कितनी सुगन्धों वाले, कितने रंगों वाले फूल अरण्य में खिले हैं।

एम-128, प्लाट नं० 29, रामाकृष्ण विहार, पटपड़गंज, दिल्ली - 110092

उर्दू की उपेक्षा नहीं संरक्षण

—डॉ भागीरथ भार्गव

उर्दू हमारी अपनी भाषा है। यह भारत में जन्मी और पल्लवित हुई है। इसे विदेशी अथवा किसी धर्म विशेष की भाषा कहकर जो जन मानस में उपेक्षा का भाव पैदा करते हैं, वे बीमार मानसिकता के शिकार हैं। आजादी के बाद उम्मीद की जा रही थी कि हिंदी राष्ट्रभाषा बनेगी और अन्य भारतीय भाषाएं भी आगे बढ़ेंगी उनका प्रसार होगा, नया साहित्य सृजित होगा। हिंदी राष्ट्रभाषा, राजभाषा बन गई किन्तु उसका वर्चस्व नहीं बना, आज भी वह अंग्रेज़ी की चेली है। उर्दू को बोलने, पढ़ने वालों का क्षेत्र निरन्तर कम होता जा रहा है जबकि उर्दू बोलने-सुनने का लुत्फ निराला है।

आजादी के पूर्व उत्तरी भारत के उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, हरियाणा व दिल्ली में उर्दू के जानकारों की संख्या पर्याप्त थी। दक्षिण भारत के हैदराबाद की तो एक जमाने में उर्दू राज-काज की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित-सम्मानित थी। वर्तमान में यह स्थिति बनी है कि उर्दू का खत आने पर उसे पढ़वाने के लिए उसके जानकार की तलाश करनी पड़ती है। मेरे शहर में एक पुराने मकान की मरम्मत के दौरान प्लास्टर हटाने पर फारसी लिपि में लिखा एक कागज मिला। अनुमान लगाया कि किसी छिपे खजाने का रहस्य उसमें है। वस्तुत: वह उर्दू-अरबी में था। कई माह की मशक्कत के बाद पढ़ा गया।

उर्दू के प्रसार की स्थिति इतनी दयनीय बन गई है कि लाखों की जनसंख्या के शहरों में उर्दू के अखबार व रिसालों के ग्राहक नहीं हैं, डाक से कुछ लोग अवश्य मंगाते होंगे। यह स्थिति धीरे-धीरे बनी है। उर्दू के प्रोत्साहन के लिए जितने प्रयास केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा होने चाहिए थे नहीं हुए है। कुछ राज्यों ने उर्दू अकादमी बनाकर, उन्हें अल्पराशि का अनुदान देकर अपने दायित्व की इतिश्री की है, अकादमी संस्थान में भी एक धर्म विशेष के लोगों को संतुष्ट करने की मंशा रही उर्दू के विकास व संवर्द्धन का लक्ष्य गौण रहा। उत्तर प्रदेश में राजभाषा संशोधन विधेयक 1989 में पास हुआ था जिसके अनुसार उर्दू को दूसरी राजभाषा का स्थान देना था किन्तु न्यायालय में दो बार स्टे मिलने के कारण कोई प्रगति अभी तक नहीं हो सकी है, मामला आज भी सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन है। दिल्ली की मुख्य मंत्री श्रीमती शीला दीक्षित ने उर्दू व गुरूमुखी को राज्य की दूसरी भाषाओं का दर्जा होने का निर्णय लिए काफी समय बीत गया है किन्तु इच्छा शक्ति के अभाव में विद्यालयों में उर्दू का शिक्षण प्रारंभ नहीं हुआ है, अभी तक उर्दू शिक्षक तक नियुक्त हुए हैं। त्रिभाषा फार्मूले के अन्तर्गत उर्दू का शिक्षण भी प्रारंभ होना था किन्तु उत्तर भारत में तृतीय भाषा के रूप में संस्कृत का अधिकांश विद्यालयों में शिक्षण शुरू हुआ, उर्दू को पुरी तरह नजर अंदाज किया गया। अन्य राज्यों की सरकारें भी उर्दू के शिक्षण के प्रति गंभीर नहीं हैं, इसमें कोई स्थायी व्यवस्था नजर नहीं आती है। हैदराबाद के साथ ही उत्तर प्रदेश उर्दू का परम्परागत केन्द्र था जहाँ उर्दू का जन्म हुआ। वर्तमान में उत्तर प्रदेश में एक भी उर्दू माध्यम का प्राथमिक अथवा उच्च प्राथमिक विद्यालय नहीं है। केवल दो हाई स्कूल हैं जो अलीगढ़ के बाद कुछेक गिने-चुने लोग रह गये है जो उर्दू पढ़ व लिख सकते हैं।

उर्दू का शिक्षण मदरसों में अवश्य होता है जहां इसके शिक्षण में उर्दू भाषा, साहित्य के स्थान पर उसके धार्मिक पक्ष पर अधिक बल होता है। उर्दू का पठन-पाठन मात्र धार्मिक दृष्टि से किया जाना साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देना, भाषा को मृत बनाना है। फलत: भाषा का स्वाभाविक विकास रुकता है। इस प्रवृत्ति से यह ध्वनि भी आती है कि उर्दू केवल मुस्लिमों की भाषा है, इस दृष्टि से मुस्लिम व अन्य धर्म के लोगों के बीच की दूरी बढ़ गई है।

अधिकांश हिंदुओं के मन में भ्रम है कि उर्दू विदेशी भाषा है या एक जमाने के विदेशी आक्रमणकारियों की भाषा है जिन्होंने भारत का विभाजन कराया। वस्तुत: जो विदेशी शासक इस्लाम धर्म भारत में लाए वे तुर्क थे, उन्हें

न तो उर्दू का ज्ञान था और न ही उर्दू उस जमाने में भारत में अस्तित्व में ही थी। उनकी भाषा तुर्की थी उनके बाद मुगल आए जिन्होंने भारत में अपना साम्राज्य जमाया व फारसी को अदालतों की भाषा बनाया। वस्तुतः मुगल उर्दू को शाही भाषा के योग्य ही नहीं समझते थे। बम्बईया फिल्मों में मुगलकालीन फिल्मों के अकबर आदि अवश्य उर्दू बोलते हैं जिसके सामान्य जन एक गलतफहमी के शिकार होते हैं कि मुगल शासक उर्दू बोलते थे। यह सत्य है कि मुगल साम्राज्य के उत्तरार्द्ध में मुगलों ने उर्दू को अपनाया। फलतः शाही खानदान व सामान्य जन के बीच का अन्तर कम हुआ। मुगलों ने जब उर्दू को राजभाषा बनवाया तब तक वह उत्तर प्रदेश में जन्म लेकर युवा बन चुकी थी। प्रारंभ में यह बाजार ओर छावनियों की भाषा थी। यह फारसी व खड़ी बोली के बीच की भाषा थी। हिंदी संस्कृतनिष्ठ बनने लगी तो उर्दू फारसी निष्ठ व अरबी के शब्दों की भी भरमार रही। ऐसा होने पर भी उर्दू एक लम्बे समय तक शिक्षित, प्रबद्ध हिंदू व मुस्लिमों की मुख्य भाषा रही जब तक अँग्रेजी की घुसपैठ नहीं हुई।

उर्दू केवल मुस्लिम की भाषा नहीं है, इसे हिंदू-मुस्लिमों ने मिलकर खूबसूरत बनाया है। देश के विभाजन के लिए उर्दू को जिम्मेदार मानना बड़ी भूल है, वस्तुतः पश्चात्य देशों में रहकर अंग्रेजी में शिक्षित कुछ मुस्लिम बुद्धिजीवियों जिनमें मौहम्मद अली व इकबाल आदि शामिल थे, ये लोग उस समय तक उर्दू कठिनाई से समझ पाते थे। इन्होंने शिक्षित मुस्लिमों को पटाया कि उनके लिए नये मुल्क की मांग की जाए। वस्तुतः उल्माओं, मौलानाओं व गरीब मुस्लिम (किसान, मज़दूर, कारीगर, दस्तकार आदि) पाकिस्तान का अंत तक विरोध करते रहे थे। वे पाकिस्तान मज़बूरी में गए जब वे यहां असुरक्षित हो गए।

पाकिस्तान बना तो मुस्लिमों के बहुमत को विश्वास में लेने के लिए राजभाषा का स्थान उर्दू को दिया गया जबकि मजे की बात यह है कि जिन क्षेत्रों को मिलाकर पाकिस्तान बना अर्थात् — पंजाब, सिंध, मुल्तान व सीमान्त क्षेत्र व पूर्वी पाकिस्तान किसी भी क्षेत्र की भाषा उर्दू नहीं थी। उर्दू को पंजाबी भाषी आज तक गले नहीं उतार पाए हैं। बंगला देश का जन्म उनके बंगला प्रेम के कारण हुआ। पंजाब, सिंध, मुल्तान व सीमान्त क्षेत्र के पाकिस्तानी आज भी अज़ीब तरह से उर्दू का उच्चारण करते हैं। वस्तुतः पाकिस्तान में सही उर्दू का उच्चारण वे लोग करते हैं जो लोग भारत से गये जिन्हे आज मुहाजिर कहा जाता है। भाषा के बारे में आजादी के बाद भारत व पाकिस्तान दोनों देशों में गड़बड़ की गई। हिंदी में संस्कृत के शब्दों की भरमार की गई तो पाकिस्तान में उर्दू को अरबी बहुल बनाकर विशिष्ट बनाने का अस्वाभाविक प्रयास किया गया। पाकिस्तानी उर्दू को वहां के लोग पसन्द नहीं करते व मजे से भारतीय फिल्में देखते हैं, भारतीय फिल्मी गाने सुनते हैं। इसी प्रकार भारत में भी गज़लों के कद्रदानों की कमी नहीं। अब तो हिंदी में भी गज़लें लिखी जा रही हैं।

उर्दू को मुस्लिम धर्मावलम्बियों पर भी जबरन थोपने की प्रवृत्ति भी दिखलाई दे रही है। भारत के मुस्लिम जो केरल, कर्नाटक, गुजरात, असम में रहते हैं, वहां की भाषा बोलते हैं उन्हें जबरन उर्दू अपनाने की बात धर्म के नाम पर कहना न्याय संगत नहीं होगा। इसी प्रकार समस्त हिन्दुओं की भाषा हिंदी नहीं है और न ही ऐसा संभव है।

भाषा को समस्या का रंग अंग्रेजों ने दिया। वे तो चले गये किन्तु अंग्रेजी छोड़ गए व भारतीय भाषाओं के बीच वैमनस्य के भाव भर गये। अंग्रेजी का वर्चस्व हमारे बहुल देश में शर्म की बात है। अंग्रेजों की चलाई भाषा नीति में उलझकर हमने अपनी विरासत खो दी। तभी तो हमने हिंदी-उर्दू के भेद को उभारकर हिंदी की अनुपम शब्द सम्पदा एवं वैभव को नष्ट होने दिया। यदि उर्दू को नागरी लिपि में लिखकर देखें पता चलेगा यह कोई नयी भाषा नहीं है। यह हिंदी का ही विस्तार है। हिंदी उर्दू की बीच की दूरी को बढ़ाने तथा भेद-बुद्धि को उभरते देख शायर अकबर इलाहाबादी ने अपनी निराली शैली में जो बात कभी कही वह आज भी प्रासंगिक है—

हम उर्दू को अरबी क्यों न करें?
व हिंदी को भाषा क्यों न करे?
झगड़े के लिए अखबारों में
मजमून तराशा क्यों न करें?
आपस में अदावत कुछ भी नहीं
लेकिन एक अखाड़ा कायम है
जब इससे फलक का दिल बहले
हम लोग तमाशा क्यों न करें?

वास्तव में आज आवश्यकता इस बात की है कि भाषा को लेकर नाना प्रकार के तमाशे समाप्त किए जाएं। हिंदी के साथ-साथ उर्दू को प्रोत्साहित किया जाए, उसके

संवर्द्धन के प्रयास हों, नया सृजनात्मक साहित्य लिखा जाए। दोनों भाषाओं के बीच परस्पर आदान-प्रदान की महती आवश्यकता है। सुखद यह है कि इस प्रकार के प्रयासों का सिलसिला शुरू हुआ है। हिंदी पाठकों की संख्या अधिक है, एतएव यदि उर्दू साहित्य हिंदी में अनुदित होकर आता है अथवा मात्र देवनागरी में आता है तो निश्चय ही उसका स्वागत होगा और पारस्परिक सद्भाव की पुन: स्थापना होगी। इसी क्रम में एक प्रसंग याद आता है। हिंदी कवयित्री व राजस्थान साहित्य अकादमी की तत्कालीन उपाध्यक्ष डॉ० सुधा गुप्ता से उदयपुर में उनके निवास पर मिलने गया था, जानकर सुखद आश्चर्य हुआ यह देखकर कि वे एक उस्तादजी से उर्दू सीख रही थीं। तब उन्होंने बताया था कि वे उर्दू साहित्य से बखूबी परिचित होना चाहती हैं। ऐसे और सुधी जन उर्दू को और मिले तो वह धन्य होगी।

हिंदी की एक प्रमुख पत्रिका ने "वर्तमान साहित्य" का वृहद आकार में उर्दू कथा विशेषांक प्रकाशित कर क्रांतिकारी कदम उठाया है। सुखद है कि हिंदी पाठकों ने विशेषांक का भरपूर स्वागत किया। विशेषांक हाथों हाथ बिक गया, अब नए संस्करण की मांग है। इसी प्रकार उर्दू के कुछ विख्यात शायरों की कृतियां पिछले कुछ समय में हिंदी में आ गई हैं, उनके स्वागत को देखते हुए यह बात रेखांकित हुई है कि यदि क्रूर राष्ट्रीय राजनीति ने दखलअंदाजी नहीं की तो दोनों भाषाओं के बीच सहकार का नया युग जन्म लेगा। इसके लिए केवल नेशनल बुक ट्रस्ट, साहित्य अकादमी व कुछ प्रान्तों की अकादमियों तक सीमित न रहकर स्वयंसेवी संस्थाएं, प्रकाशन संस्थान भी प्रयास करें तो आशानुकूल परिणाम सामने आएंगे। उर्दू का बेहतरीन साहित्य जिसमें कहानी, कविता, नाटक और उपन्यास ही नहीं, आत्मकथा और संस्मरण जैसा गद्य साहित्य भी है जो हिंदी के माध्यम से उर्दू साहित्य में शहरी रूचि रखने वाले पाठकों तक पहुंच सकेगा।

एक सर्वेक्षण के अनुसार हिंदी में प्रकाशित दस सर्व श्रेष्ठ किताबों की सूची में डॉ० बशीरबद्र की कविता पुस्तक **"उजाले अपनी यादों के"** द्वारा स्थान पाना सुखद संभावना की ओर संकेत है। इसी प्रकार फिल्म गौरखपुरी द्वारा संपादित पुस्तक **"जंजीर टूटती हैं"** में भारतीय राष्ट्रीयता के भाव जो उर्दू कविता में देखने को मिलते हैं, उसका सहज दिग्दर्शन हुआ है। हिंदी में इस पुस्तक का भी स्वागत होगा जिसके माध्यम से उर्दू कवियों की अभिव्यक्ति से हिंदी पाठकों को वाकिफ होने का अवसर मिलेगा। इस पुस्तक से दर्जनों उर्दू शायरों की शायरी का मज़ा लिया जा सकता है।

उर्दू के प्रोत्साहन के लिए एक शुभ समाचार है। सागर विश्वविद्यालय के कुलपति और साहित्यकार शिवकुमार श्रीवास्तव ने रायपुर में पदुमलाल पुन्नालाल सृजनपीठ के एक आयोजन में बताया था कि उन्होंने अपने विश्वविद्यालय में हिंदी के पाठ्यक्रम में गालिब को भी शामिल किया है और अब वहां कबीर के साथ छात्र गालिब को भी पढ़ रहे हैं। उनका कहना था कि इसी तरह उर्दू के पाठ्यक्रम में हिंदी के लेखकों को भी शामिल किया जाना चाहिए। इसी प्रकार दिल्ली विश्वविद्यालय ने अपने अंग्रेजी के पाठ्यक्रम में बीसवीं सदी के भारतीय लेखकों को भी शामिल करने का फैसला किया है। इस निर्णय से अब छात्र शेक्सपियर और कीट्स के साथ टैगोर, प्रेमचन्द, विजय तेन्दुलकर, अभिताभ घोष, जयंत महापात्र को भी पढ़ेगें। अंग्रेजी ऑनर्स में बीसवीं सदी के भारतीय साहित्यकारों पर केन्द्रित एक पर्चा अनिवार्य किया गया है। निश्चित रूप से यह एक अच्छी शुरुआत है। डॉ० नामवर सिंह के संयोजन में एन०सी०ई०आर०टी० द्वारा गठित समिति द्वारा बारहवीं कक्षा की हिंदी पुस्तकों में खड़ी बोली के नजदीक रहे उर्दू के शायरों को भी सम्मिलित किया गया था।

हिन्दू-मुस्लिम लेखक समान रूप से हिंदी-उर्दू के साहित्य की श्रीवृद्धि करते रहे हैं। जातिगत, धर्मगत, भाषा को लेकर किसी भी प्रकार के झमेले से बचा जाना चाहिए। अधिकाधिक अनुभव, संस्कार व संस्कृतियाँ जब एक साथ जुड़ते हैं तो किसी भी भाषा का साहित्य विस्तार पाता है, नये-नये आयाम खुलते हैं। अतएव वर्तमान में आवश्यकता है कि उर्दू के प्रति उपेक्षा का रवैया हर स्तर पर समाप्त हो। हिंदी-उर्दू तो नजदीक आए ही अन्य भारतीय भाषाओं और हिंदी-उर्दू को निकट लाने के ईमानदार प्रयास किए जाएं तब निश्चय ही परिणाम शुभ होंगे।

—डॉ० भागीरथ भार्गव, 88, आर्य नगर, अलवर-301001 (राजस्थान)।

गुर्दे की असाध्य बीमारियों से रोकथाम

—डॉ० शाम सुन्दर

गुर्दे का शनैः शनै फेल हो जाना गुर्दे की असाध्य बीमारियों में से एक आम है और शरीर को अशक्त बना देने वाली बीमारी है। यह लगातार बढ़ने वाली और शरीर को कई प्रकार से क्षतिग्रस्त करने वाली बीमारी है जिसके निदान के लिए अन्ततः डायलिसिस कराने या गुर्दे के प्रत्यारोपण की आवश्यकता होती है। मधुमेह, तनाव और हृदय धमनी बीमारियों की तरह ही गुर्दे की असाध्य बीमारी भी राष्ट्र के लिए एक मुख्य स्वास्थ्य समस्या बन गई है। यद्यपि गुर्दे की इस असाध्य बीमारी के संबंध में कोई निश्चित जानपदिक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं परन्तु फिर भी अन्य स्रोतों से इकट्ठा की गई सूचना के अनुसार 10 लाख की जनसंख्या पर लगभग 8000 व्यक्ति गुर्दे की असाध्य बीमारी से पीड़ित हैं और 10 लाख की जनसंख्या पर लगभग 150 व्यक्ति अन्तिम अवस्था की गुर्दे की बीमारी से पीड़ित हैं जिसके लिए नियमित डायलिसिस कराने या गुर्दे का प्रत्यारोपण करने की आवश्यकता होती है। जिन व्यक्तियों का गुर्दा फेल हो जाता है उनमें से दो तिहाई मधुमेह और तनाव (उच्च रक्त चाप) के कारण होते हैं। मधुमेह और उच्च रक्तचाप से होने वाली गुर्दे की बीमारियां ऐसी हैं जिनके लक्षण स्पष्ट दिखाई नहीं देते परन्तु वे धीरे-धीरे पनपती रहती हैं और अंत में व्यक्ति की मृत्यु का कारण बनती हैं। हो सकता है कि अंग पूरी तरह से क्षतिग्रस्त हो जाए और इसके बारे में कोई पता ही न चले। गुर्दे की हल्की सी बीमारी भी उच्च विकृति का कारण बन सकती है और प्राणघातक हो सकती है। गुर्दे फेल होने पर रोगियों में धमनीय तथा हृदय की बीमारियां तेजी से विकसित होती हैं। आम जन समुदाय की तुलना में 45 से 54 वर्ष के आयु वर्ग के व्यक्तियों में हृदय रोग की संभावना 65 प्रतिशत अधिक होती है। गैर मधुमेह रोगियों की तुलना में मधुमेह के कारण होने वाली गुर्दे की बीमारी के रोगियों में हृदय रोग विकसित होने का 15 प्रतिशत अधिक खतरा होता है। गुर्दे के धीरे-धीरे फेल होने के कारण पीड़ित लगभग 50 प्रतिशत की मृत्यु दिल का दौरा पड़ने से होती है। इन लक्षणविहीन बीमारियों का प्रारम्भिक अवस्था में ही पता लगा लिया जाना चाहिए। इससे विभिन्न उलझनों से बचा जा सकता है या उन्हें कम किया जा सकता है। उसकी जानकारी रक्त चाप की जांच, रक्त परीक्षण तथा पेशाब की जांच से प्राप्त की जा सकती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका, सिंगापुर आदि जैसे विभिन्न देशों में गुर्दे की बीमारी का पता लगाने के लिए नियमित जांच कैंप लगाए जा रहे हैं, जिन्हें कीप प्रोजेक्ट्स (keep projects गुर्दा आद्य मूल्यांकन परियोजना) के रूप में जाना जाता है जो कि मधुमेह कैंपों के सदृश होते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में लगाए गए ऐसे एक कैंप में मधुमेह, तनाव और अन्तिम अवस्था के गुर्दे की बीमारी के मरीजों के संबंधितों की गई जांच से पता चला कि उनमें से 30 प्रतिशत में पेशाब की अनियमितताएं थीं जो गुर्दे की बीमारी होने का संकेत देती हैं। इस घातक बीमारी के निकट संबंधियों को गुर्दे की बीमारी होने का बहुत अधिक खतरा रहता है, जिन्हें यह सलाह दी जाती है कि वे वर्ष में एक बार अपने स्वास्थ्य की जांच अवश्य कराएं।

गुर्दे की बीमारी का पता लगाने के लिए ऐसे जांच कैंप हमारे देश में भी समुदाय और जिला स्तरों पर आयोजित किए जाने चाहिए। गुर्दे की बीमारी प्रारम्भिक अवस्था पर होने की स्थिति में किसी नेफरोलोजिस्ट की सलाह ली जानी चाहिए ताकि इस बीमारी की रोकथाम की जा सके। इन्फेक्शन गुर्दे में पथरी होने की बीमारी, दर्द दूर करने की दवाइयों का अत्यधिक सेवन और चर्मरोग आदि अन्य बीमारियां हैं जिनसे गुर्दे की बीमारियां होने का खतरा हो सकता है। इस बीमारी का प्रारम्भिक अवस्था में पता लगाने के लिए किसी भी व्यक्ति को गुर्दे के सामान्य कार्यों, बीमारी होने के लक्षणों और गुर्दे की बीमारी के चिन्हों की जानकारी होनी चाहिए।

गुर्दे के सामान्य कार्य

गुर्दा शरीर का एक महत्वपूर्ण अंग है जो हमारे शरीर के केंद्र में अवस्थित हैं, जो सभी अंगों के जैव रासायनिक कार्यों का संचालन करता है। हमारे शरीर में सेम के आकार के दो गुर्दे होते हैं जो हमारी रीढ़ की हड्डी के दोनों ओर लघुकटि के ऊपर स्थित होते हैं। प्रत्येक गुर्दे की एक मिलियन

प्रक्रियाएं होती हैं जिन्हें नेफरान्स कहते हैं। नेफरान्स रक्त को छान लेते हैं और बाकी पेशाब बन जाता है।

गुर्दे के मुख्य कार्य

हमारे शरीर से विषैले पदार्थों को निकालते हैं। यह रक्त में विषैले तत्वों को छानता है और रक्त को साफ करता है। ये विषैले तत्व पेशाब के साथ शरीर से बाहर निकल जाते हैं। यदि ये विषैले पदार्थ हमारे शरीर में जमा होने लगें तो ये हमारे शरीर की कोशिकाओं को विषाक्त बना देती है।

2. यह शरीर में तरल पदार्थों और विभिन्न इलैक्ट्रोलाइट्स का संतुलन बनाता है। यह हमारे शरीर से अतिरिक्त पानी को निकालता है और दस्त, उल्टी, रक्त की कमी आदि से होने वाले अत्यधिक स्राव की कमी को पूरा करने के लिए तरल पदार्थों का जमा रखता है।

3. रक्त दाब को नियंत्रित रखता है। गुर्दा, विशेषत: युवकों में उच्च रक्त दाब के लिए भी दोषी माना जाता है।

4. हार्मोन का त्याग करता है जो होमोग्लोबिन बढ़ाने में सहायक होता है।

5. शरीर में विटामिन डी का निर्माण करता है जो हड्डियों का विकास करता है और उन्हें मजबूत बनाता है।

गुर्दे की बीमारियों का खतरा होने के लक्षण

1. उच्च रक्त चाप

2. रात के समय बार-बार पेशाब आना

3. पेशाब में रक्त या प्रोटीन का होना

4. आँखें या टखनों के आस-पास सूजन

5. थका-थका महसूस करना, सांस लेने में तकलीफ होना तथा चेहरे का पीला पड़ना

6. कमर दर्द होना जो शारीरिक क्रिया से संबंधित न हो।

7. भूख कम लगना, मिचली होना या उल्टी आना ।

नियमित जांच (रोकथाम परियोजना)

वर्ष में एक बार निम्नलिखित जांच कराई जानी चाहिए :—

1. रक्तचाप मापना (140/90 असामान्य है।)

2. ब्लड शुगर की जांच—खाली पेट और खाना खाने के दो घंटे बाद

3. रक्त यूरिया और सीरम क्रिटिनाइन

4. रक्त और प्रोटीन के लिए पेशाब जांच (डिपस्टिक जांच)

5. अधिक आयुवर्ग के लोगों की यह जांच कि उनकी प्रोस्टेट ग्रन्थियां तो नहीं बढ़ गई

6. मधुमेह के रोगियों के लिए निम्नलिखित जांच आवश्यक हैं :—

क. माइक्रो एल्नबुमिन के लिए पेशाब की जांच।

ख. ग्लाइकोसेटिड होमोग्लोबिन एच वी ए एल सी।

ग. लिपिड प्रोफाइल तथा ई सी ज़ी जांच।

घ. मधुमेह के कारण होने वाले परिवर्तन के लिए आंखों की जांच।

जब रक्त यूरिया 40 mg% तथा सीरम क्रिटिनाइन 1.5 mg% हो जाए तो यह गुर्दे के फेल हो जाने के लक्षण हैं। यदि रक्त या पेशाब में कोई अनियमितता दिखाई दे तो व्यक्ति को किसी स्वास्थ्य चिकित्सक से परामर्श करना चाहिए और इस बीमारी के बारे में तथा इससे होने वाले सभी खतरनाक पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करनी चाहिए।

मधुमेह से पीड़ित गुर्दे के रोगी

इसमें अंशमात्र भी संदेह नहीं है कि यदि प्रारम्भिक अवस्था में ही इसकी ओर ध्यान दिया जाए तो न केवल मधुमेह के कारण होने वाली गुर्दे की बीमारी को बढ़ने से रोका जा सकता हैं बल्कि इससे पैदा होने वाली उलझनों से बचा जा सकता है या उन्हें टाला जा सकता है। मधुमेह नियंत्रण तथा उलझन परीक्षण (डी सी सी टी) से निश्चित तौर पर यह पता चलता है कि गहन ब्लड शुगर नियंत्रण (ग्लाइकोसेटिड एच वी 7.0) से माइक्रो एल्बुमिन यूरिया के खतरे को अपेक्षाकृत 39% तक कम किया जा सकता है और गुर्दे की बीमारी को 54% तक टाला जा सकता है। मधुमेह से होने वाली गुर्दे की बीमारी की प्रारम्भिक अवस्था को मधुमेह को अच्छी प्रकार नियंत्रित रखना चाहिए रक्तचाप नियंत्रण को (120/75%) तक सीमित रखना चाहिए। ए.सी.ई.आई. श्रेणी की दवाइयों का सेवन करने से बीमारी की गति को 50 प्रतिशत से भी अधिक कम किया जा सकता है, शरीर के वजन को नियंत्रित रखने, लिपिड नियंत्रण, धूम्रपान न करने और मांसाहारी भोजन का सेवन न करने आदि से भी बीमारी से बचा जा सकता है।

तनाव से होने वाली गुर्दे की बीमारी

इसमें कोई संदेह नहीं कि अनियंत्रित उच्च रक्त दाब से दिल के दौरा पड़ने, दिल के स्ट्रोक लगने और गुर्दे के फेल होने का खतरा हो सकता है। सिस्टोलिक रक्त चाप डिस्टोलिक रक्त चाप से अधिक खतरनाक होता है। लक्षित अंग को क्षतिग्रस्त होने से बचाने के लिए व्यक्ति को रक्तचाप को पूरी तरह नियंत्रित करना चाहिए। इस प्रबंध व्यवस्था के लिए जीवन शैली, भोजन आदि को बदलने तथा नियमित रूप में तनावमुक्त करने की दवाओं का सेवन करने की नितांत आवश्यकता होगी। इसके लिए व्यक्ति को अपने शरीर के भार को नियंत्रित रखना होगा, नियमित शारीरिक तथा मानसिक विश्राम करने तथा धूम्रपान बंद करना आवश्यक है।

गुर्दे में पत्थरी की बीमारी

इससे धीरे-धीरे गुर्दा क्षतिग्रस्त हो जाता है और पत्थरी की पुनरावृति होने का पूरा खतरा रहता है। दूसरे इसके रोगनिरोधक उपचार के तौर पर भोजन में परिवर्तन, द्रव्य की अधिक मात्रा और दवाइयों का सेवन करना चाहिए ताकि गुर्दों में पत्थरी के बनने से बचा जा सके।

आवर्ती मूत्रीय भाग का इन्फेक्शन

व्यक्ति को विशेषतः पुरुष मरीजों को इस बीमारी के मूलभूत कारणों का पता लगाने के लिए पूरी जांच करानी चाहिए। मूत्रीय भाग के इन्फेक्शन और गुर्दे को क्षतिग्रस्त होने से बचाने के लिए व्यक्ति को नियमित रूप में यूरो रोग निरोधक एन्टीबायोटिक दवा और पर्याप्त मात्रा में द्रव्य पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

व्यक्ति को अत्यधिक मात्रा में दर्दनाशक दवाओं के सेवन से बचना चाहिए जो गुर्दे के फेल होने के मुख्य कारण हैं। ये सभी दवाएं किसी स्वास्थ्य चिकित्सक की सलाह पर ही लेनी चाहिए।

एक बार शनैःशनैः (वृक्कीय) गुर्दे के फेल होने का पता लग जाने की स्थिति में व्यक्ति को किसी नेफरोलोजिस्ट से परामर्श लेकर उचित जांच करानी चाहिए ताकि इसके मूलभूत कारणों का पता लगाया जा सके और उन पर पूरी तरह काबू पाकर और प्रभावी हस्तक्षेप कर इससे होने वाली उलझनों को टाला जा सके। अन्तिम अवस्था की गुर्दे की बीमारी उस अवस्था पर होती है जबकि बचे हुए गुर्दे में कवेल 10 प्रतिशत तक ही कार्य करने की क्षमता रह जाती है और रोगी केवल दवाइयों तक ही सीमित नहीं रह सकता। इस अवस्था में व्यक्ति को डायलिसिस और प्रत्यारोपण के रूप में अतिरिक्त वृक्कीय सहायता की आवश्यकता होती है। डायलिसिस की सहायता से जीवन को कुछ हद तक संभव बनाया जा सकता है जबकि प्रत्यारोपण इसका पूर्ण और सही इलाज है। डायलिसिस/होमोडायलिसिस में रक्त को शरीर से बाहर निकाला जाता है और इसे कृत्रिम गुर्दे की सहायता से साफ करके रोगी के शरीर में वापिस भेज दिया जाता है। इसे सप्ताह में तीन बार किया जाना चाहिए। हमारे देश में इसे अस्पतालों में अन्तःरोगी उपचार के रूप में किया जाता है। इस उपचार में 15,000/- रु० महीने का खर्च होता है। डायलिसिस में हमारे पेट के लिवर में स्थित झिल्ली को कृत्रिम गुर्दे के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इस प्रक्रिया के अनुसार पेट के लिवर में रक्त साफ करने वाला द्रव डाला जाता है जो लगभग 4 से 6 घंटे तक पेट में रहता है जिसे बाद में गुरुत्वाकर्षण द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। यह उपचार घर पर ही होता है और इस उपचार पर प्रतिमास लगभग 18,000/-रु० खर्च होते हैं। डायलिसिस और प्रत्यारोपण पर बहुत अधिक खर्च होता है। हमारे देश में 3 प्रतिशत से भी कम गुर्दे के फेल होने के मरीज इस उपचार को अपनाते हैं। इसलिए, यह बहुत आवश्यक है कि गुर्दे की बीमारी का प्रारम्भिक अवस्था में ही पता लगा लेने के हर संभव प्रयत्न किए जाने चाहिए।

यह सिफरिश की जाती है कि गुर्दे की बीमारी का तत्काल पता लगाने के लिए नियमित रूप से स्वास्थ्य जांच वर्ष में एक बार अवश्य करा ली जानी चाहिए ताकि इस बीमारी से छुटकारा पाने, इसकी रोकथाम करने या इससे होने वाली उलझनों से बचने के लिए प्रभावी उपाय किए जाएं। मधुमेह, तनाव और गुर्दे की बीमारी के मरीजों के रिश्तेदारों में गुर्दे की बीमारी होने का बड़ा खतरा बना रहता है।

वरिष्ठ नेफ्रॉलाजिस्ट, राम मनोहर लोहिया अस्पताल, नई दिल्ली।

729 HA/03—5A

उच्च रक्तचाप

-डा. के. के. अग्रवाल

उच्च रक्तचाप (हाइपरटेंशन) आज के अति तकनीकी औद्योगिक युग की तनावपूर्ण जीवन शैली से जुड़ा आधुनिक रोग है। जैसे-जैसे आधुनिक जीवन की गति बढ़ती जाती है वैसे-वैसे उच्च रक्तचाप का रोग भी बढ़ता जाता है। यह रोग हालांकि धीरे-धीरे बढ़ता है परंतु यह मृत्यु का मुख्य कारण बनता जा रहा है।

उच्च रक्तचाप (हाइपरटेंशन) या अति रक्तदाब (हाईब्लड प्रेशर) का कोई लक्षण प्रत्यक्ष दिखाई नहीं देता परंतु यह हृदय, मस्तिष्क आंखों और गुर्दों जैसे महत्वपूर्ण अंगों को भीतर ही भीतर नुकसान पहुंचाता रहता है। अत: इस रोग का शीर्घ पता लगाना और उसका उपचार करना आवश्यक है।

रोगी के शरीरिक या मानसिक क्रियाकलाप, दिन के समय या अनिद्रा आदि जैसे कई कारणों से रक्तचाप घटता-बढ़ता रहता है जिससे वह कहना मुश्किल हो जाता है कि सामान्य रक्तचाप कितना होना चाहिए। इसके अलावा भिन्न-भिन्न आयु वर्ग के लोगों में भी सामान्य रक्तचाप भिन्न-भिन्न होता है।

फिर भी यह आम राय है कि प्रकुंचन दाब (जिस समय हृदय सिकुड़ता है) 140 मिमी. Hg. से कम होना चाहिए जबकि प्रसरण दाब (जिस समय हृदय फैलता है) 90 मिमी. Hg. से अधिक नहीं होना चाहिए। वयस्कों में 'सामान्य' औसत प्रकुंचन दाब 110 से 140 के बीच रहता है जबकि औसत प्रसरण रक्तदाब 70 से 90 मिमी. Hg. के बीच रहता है।

उच्च रक्तचाप का पहली बार पता सामान्यत: चिकित्सा जांच के समय या फिर किसी अन्य बीमारी की जांच करते समय चलता है। सिरदर्द होना, घबराहट होना, मूर्छित होना, नाक से खून बहना, धुंधला दिखाई देना, छाती में दर्द, श्वास लेने में परेशानी, धड़कन होना और कानों में घंटियां बजना आदि लक्षणों को पूर्व चेतावनी समझना चाहिए।

उच्च रक्तचाप की पुष्टि करने के लिए डॉक्टर आमतौर पर कई दिनों तक एक ही समय पर और यह सुनिश्चित करने के बाद कि रोगी मानसिक और शारीरिक रूप से आराम की अवस्था में है, रक्त दाब मापते हैं। उच्च रक्तचाप को प्रसरण रक्तदाब के मान के अनुसार हल्के, सामान्य या गंभीर ताव के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

उच्च रक्तचाप को रोगियों में आम तौर पर पाया जाने वाला प्राथमिक उच्च रक्तचाप है जिससे 90 से 95% रोगी पीड़ित होते हैं और यह किसी खास रोग के होने या शरीर के किसी अंग विशेष के सही काम न कर पाने के कारण नहीं होता बल्कि इसके कई अन्य कारण हो सकते हैं जैसे-आनुवंशिकता, जीवनशैली, व्यवसाय और कभी-कभी नमक या वसा का बहुत अधिक सेवन।

दूसरे प्रकार का अर्थात् द्वितीयक उच्च रक्तचाप गुर्दे थायरॉयड, हृदय, रक्त वाहिनियों या अधिवृक्क ग्रंथियों जैसे किसी अंग के रोगग्रस्त होने के कारण होता है और यदि इसके मूल कारण का पता चल जाए तो इसे प्राय: ठीक किया जा सकता है।

उच्च रक्तचाप के सभी रोगियों को पूरी तरह से ठीक नहीं किया जा सकता परंतु उसे नियंत्रित अवश्य किया जा सकता है और वह भी बिना किसी दवाई के। दवाई के अलावा भी कुछ लोक प्रचलित उपाय हैं जैसे-योग, ध्यान और जैव संभरण (बायोफीड बैक)। इनसे प्रतिदिन की जीवन-चर्या में तनाव को कम किया जा सकता है या उसका समुचित नियंत्रण किया जा सकता है।

तेज-तेज चलना, तैरना और हल्की जॉगिंग जैसे साधारण एवं हल्के-फुल्के व्यायाम यदि सामान्य रूप से किए जाएं तो बहुत लाभदायक सिद्ध होते हैं परंतु भारोत्तोलन आदि जैसे भारी व्यायामों से बचना चाहिए क्योंकि इसे रक्त चाप बढ़ता है। असल उद्देश्य है शरीर का यथोचित वजन बनाए रखना।

नियमित व्यायाम से पूरे शरीर का रक्त संचार ठीक रहता है और व्यक्ति तनाव मुक्त रहता है। यह मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य के लिए अच्छा रहता है और स्वाभाविक रूप से तनाव से मुक्ति देता है। तंबाकू में पाए जाने वाले निकोटीन

और अन्य विषाक्त पदार्थ हृदय की गति को बढ़ाते हैं और रक्त चाप में वृद्धि कर देते हैं। धूम्रपान से भी कुछ उच्च रक्तचापरोधी दवाइयों का प्रभाव कम हो जाता है। धूम्रपान करने वालों को धूम्रपान न करने वालों की तुलना में हृदयघात होने का दुगुना खतरा बना रहता है।

ऐलकोहल का सेवन यदि एक दिन में दो ओंस से अधिक किया जाए तो इससे भी रक्तचाप बढ़ता है। ऐलकोहल से शरीर का वजन भी बढ़ता है जिससे उच्च रक्तचाप की संभावना और बढ़ जाती है।

आहार की मात्रा को नियंत्रित करके भी उच्च रक्तचाप को काफी हद तक कम किया जा सकता है। नमक का सेवन कम कर देने से न केवल रक्तचाप कम होता है बल्कि यह दवाइयों की मात्रा और उनके दुष्प्रभावों को कम करने में भी सहायक होता है। अधिक कोलेस्ट्रोल और संतृप्त वसा वाला भोजन न करने से भी रक्तचाप को नियंत्रित रखा जा सकता है।

अंततः डॉक्टर के पास उच्च रक्तचाप रोधी कई दवाएं होती हैं जो रोगी की विशिष्ट अपेक्षा के अनुसार उसे दी जा सकती हैं। प्रत्येक व्यक्ति पर दवाइयों का प्रभाव अलग-अलग होता है और इसलिए यह आवश्यक है कि डॉक्टर द्वारा बताए समय पर निर्धारित मात्रा का ही सेवन किया जाए।

जीवन शैली में मामूली परिवर्तन करके और उपयुक्त दवाइयों के उपचार से मस्तिष्कीय प्रघात और हृदयघात से बचा जा सकता है, गुर्दों, आखों और हृदय में होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है और सहयोग करने वाले रोगियों के मामले में तो इसे पूरी तरह नियंत्रित किया जा सकता है।

मूलचंद के. आर. हास्पिटल, नई दिल्ली

ध्वनि प्रदूषण : समस्या एवं समाधान

— 1 राजीव कुमार सिंह,
2 उपेन्द्र नाथ रय
3 शरद कुमार

प्राचीन काल में हमारे चारों तरफ का वातावरण अत्यंत सुरम्य था झरनों एवं नदियों का मधुर स्वर, पक्षियों की कलरव एवं वेदों मंत्रों की ध्वनि से सम्पूर्ण वातावरण आनन्दित होता था, परन्तु बढ़ती जनसंख्या, औद्योगीकरण एवं मानव की जरूरतों ने वातावरणीय प्रदूषण को बढ़ावा दिया है। वर्तमान में वातावरणीय प्रदूषण, औद्योगिक प्रगति एवं सभ्यता के चरमोत्कर्ष के एक अंतिम उत्पाद का रूप है जो व्यक्तियों में भौतिक सुखों एवं आरामदायी जीवन की चाह से उत्पन्न हुआ है। प्रदूषण की समस्या आज राष्ट्रीय न होकर अंतर्राष्ट्रीय हो चुकी है। बढ़ती हुई जनसंख्या, औद्योगीकरण एवं नगरीकरण ने प्रदूषण की समस्या को और भी अधिक भयावह बना दिया है। इसी वातावरणीय प्रदूषण के क्रम में जल, वायु एवं मृदीय प्रदूषण के साथ-साथ ध्वनि भी सम्मिलित हो गयी है। ध्वनि का उत्पादन वार्तालाप अथवा एक दूसरे के हाव भावों एवं विचारों को समझने के लिए किया जाता था परंतु वर्तमान समय में उच्च क्षमता के ध्वनि विस्तारक यंत्रों, कान फोड़ू, लाउडस्पीकरों, आडियो वीडियो सिस्टमों, टेलीविजन सेटों, डिस्कोथेक, उच्च क्षमता की कारखानों की स्वचालित मशीनों, नित वाहनों की बढ़ती हुई संख्या एवं विद्युत आपूर्ति के लिए डीजल एवं पेट्रोल के जेनरेटरों व निर्माण कार्य में लगी मशीनों ने व्यापक स्तर पर ध्वनि को प्रदूषित कर दिया है। प्रत्येक मानव एवं जीव जंतुओं पर ध्वनि प्रदूषण का व्यापक प्रभाव पड़ता है। परंतु इसकी क्षमता एवं प्रभाव का आंकलन अलग अलग होता है। ध्वनि प्रदूषण को विभिन्न विद्वानों एवं पर्यावरणविदों ने अपने अनुसार परिभाषित किया है। कुछ विद्वानों एवं पर्यावरणविदों की परिभाषायें नीचे वर्णित हैं—

साउथवीक (1976) के अनुसार, "मनुष्य के क्रियाकलापों के फलस्वरूप पर्यावरण में हो वाले प्रतिकूल परिवर्तन को पर्यावरणीय प्रदूषण कहते हैं।"

डा. वेम ओ. कुन्डसन के अनुसार "ध्वनि एक मीठे धुएं की तरह का जहर है" ध्वनि प्रदूषण एक खतरनाक समस्या के रूप में माननीय वातावरण के लिए खतरा बनता जा रहा है। यह एक ऐसा प्रदूषण है जिसको देखा नहीं जा सकता सिर्फ महसूस किया जा सकता है। ध्वनि प्रदूषण से उत्पन्न तनाव एक प्रकार का जहर है जो कि मनुष्य की आयु को कम कर देता है, क्योंकि ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव जल, वायु एवं मृदा पर न पड़कर सीधे प्राणियों के शरीर पर पड़ता है।

सर डोनाल्ड के अनुसार, "90 डेवीबल (dB) क्षमता की ध्वनि दृष्टिभ्रम पैदा कर सकती है। इसके अलावा यह मनुष्य की मानसिक क्षमता व कुशलता को कम कर सकती है।"

ध्वनि प्रदूषण विरोधी अंतर्राष्ट्रीय संस्था के प्रधान प्रोफेसर गुन्थेर लेहमान के अनुसार :

"शोर प्रौद्योगिकी की प्रगति का नहीं, अपितु उसकी प्रतिगति का प्रतीक है।"

डा. नुडसन ने अपने शोध अनुभवों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि, ध्वनि प्रदूषण प्रत्येक 10 वर्षों में दुगुना हो रहा है।

मोरवर्ग विश्वविद्यालय के डा. ग्रॉल के अनुसार :

"180 डेसीबल या उससे अधिक क्षमता की ध्वनि तीव्रता से मनुष्य की मृत्यु तक हो सकती है।"

आस्ट्रिया के डा. ग्रिफिथ के अनुसार, तीव्र शोर असमय मनुष्य को बूढ़ा कर सकता है।

नोबल पुरस्कार विजेता, राबर्ट कोच के अनुसार :

"एक दिन ऐसा आएगा जब मनुष्य को सबसे बुरे शत्रु के रूप में निर्दयी शोर से संघर्ष करना पड़ेगा।"

ब्रिटेन के आर.डब्ल्यू. फोर्न के अनुसार ध्वनि की 90 से 118 डेसीबल (db) की क्षमता मनुष्य के कानों के भीतरी,

नाजुक भागों को बुरी तरह क्षतिग्रस्त कर सकती है, यदि मनुष्य अधिक समय तक इस ध्वनि सीमा में व्यतीत करे।

अनियंत्रित, अत्यधिक तीव्र, असहनीय किसी भी असामान्य ध्वनि को ध्वनि प्रदूषण कहते हैं। आज हम ध्वनि प्रदूषित वातावरण में ही रह रहे हैं जिसका सामना मनुष्य को जन्म से लेकर अपनी मृत्यु तक परोक्ष या अपरोक्ष रूप में करना पड़ता है। प्रदूषित ध्वनि हमारी कार्य क्षमता, सहन क्षमता, मानसिक क्षमता, शारीरिक क्षमता, वार्तालाप, कार्य पद्धति एवं नींद में अवरोध पैदा करती है। आज दुनिया का कोई भी शहर या गांव ऐसा नहीं है जो इस मानव जनित आधुनिक प्रदूषण की चपेट में न हो क्योंकि ध्वनि प्रदूषण मानव की अति उपभोक्तावादी नीतियों का ही दुष्परिणाम है जिसको झेलना हमारी मजबूरी है।

ध्वनि शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के शब्द "नाऊसिया" से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है असामान्य या अनियंत्रित ध्वनि जो कष्टकारी एवं दुष्प्रभाव मुक्त हो। शोर का तात्पर्य एक अवांछनीय ध्वनि से है जो पर्यावरण में ध्वनि प्रदूषण का प्रमुख कारण बनती है। कोई भी ध्वनि, ध्वनि प्रदूषण हो सकती है यदि वह किसी भी प्रकार का अवरोध उत्पन्न करती हो। ध्वनि वातावरण में जीवित एवं अजीवित वस्तुओं के चलने से उत्पन्न होती है। इस ध्वनि प्रदूषण को उत्पन्न करने वाले स्रोत भी विभिन्न प्रकार के होते हैं जिसमें से मानव निर्मित ध्वनि उत्पादक स्रोत अधिक मात्रा में ध्वनि प्रदूषण के स्रोतों को उनकी ध्वनि उत्पादकता के आधार पर तीन प्रमुख श्रेणियों में विभक्त किया गया है।

1. प्राकृतिक स्रोत
2. औद्योगिक स्रोत
3. सामान्य स्रोत अथवा मानव आधारित स्रोत

प्राकृतिक स्रोत

प्रकृति में घटित होने वाली घटनाएं भी ध्वनि प्रदूषण का अस्थाई स्रोत होती है। जैसे ज्वालामुखी विस्फोट, तूफान, भूकम्प, बिजली का कड़कना, बादलों की गड़गड़ाहट, नदियों एवं झरनों का शोर एवं पहाड़ों पर पत्थरों एवं भूमि स्खलन आदि परंतु ये प्राकृतिक स्रोत एक क्षेत्र विशेष में अथवा सीमित दायरे में स्थित होते हैं जिसके कारण इनका प्रभाव बहुत बड़ी आबादी पर नहीं पड़ता है क्योंकि इनमें उत्पन्न ध्वनि का प्रभाव क्षेत्र भी सीमित दायरे में ही मानव एवं जीवधारियों को प्रभावित करता है। इसके अलावा इनकी तीव्रता एवं घटना की अवधि का अल्पकालिक होना भी मानव जीवन पर स्थाई दुष्प्रभाव नहीं डाल पाता है। इसलिए, ध्वनि प्रदूषण के प्राकृतिक स्रोत मानव एवं जीव जंतुओं के लिए बहुत अधिक घातक नहीं होते हैं। उनसे होने वाले प्रभावों को संतुलित करने की क्षमता प्रकृति में मौजूद रहती है।

औद्योगिक स्रोत

वर्तमान समय में औद्योगिक प्रगति ही किसी भी देश की प्रगति का मूलभूत आधार है जो देश जितना विकसित एवं प्रगतिशील वहां औद्योगीकरण भी उतना ही सुदृढ़ है, परन्तु इस प्रगति के साथ ही विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में उद्योग धंधों में लगी उच्च क्षमता की बड़ी बड़ी मशीनों, बड़ी तादाद में श्रमिकों की संख्या, उच्च ध्वनि क्षमता के पावर सायरन व हार्न के अतिरिक्त उत्पादित माल की पैकिंग एवं ढुलाई में प्रयुक्त मशीनें एवं माल ढुलाई के भारी वाहन इत्यादि मिलकर उच्च क्षमता की ध्वनि का उत्पादन करते हैं जिसका दुष्प्रभाव औद्योगिक क्षेत्रों के आस पास रहने वाले मनुष्यों एवं कारखानों में कार्य करने वाले मजदूरों पर पड़ता है। औद्योगिक क्षेत्रों के समीप रहने वाले बच्चों एवं गर्भवती माता के पेट में पल रहे बच्चे पर इस प्रदूषण का दीर्घकालिक एवं अत्यंत हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

सामान्य स्रोत अथवा मानव आधारित स्रोत

ध्वनि प्रदूषण उत्पन्न करने वाले मानव आधारित सामान्य स्रोतों के अंतर्गत ध्वनि उत्पन्न करने वाले संसाधनों की संख्या अधिक है। इनमें से ज्यादातर मानव के अपने सुख एवं मनोरंजन के साधन के रूप में प्रयुक्त होने वाले संसाधन हैं। आज की तेज भाग दौड़ की जिन्दगी ने मानव को भौतिकवादी युग की ओर ऐसा धकेल दिया है कि वह निरंतर प्राकृतिक संसाधनों का अनियमित ढंग से दोहन करके प्रदूषण को बढ़ावा दे रहा है। ध्वनि भी अति उपभोक्तावादी परम्परा का दुष्परिणाम है। मानव निर्मित ध्वनि प्रदूषण के स्रोत निम्नवत हैं :—

(i) **लाउडस्पीकर :**—वर्तमान समय में लाउडस्पीकरों का शहरों, कस्बों एवं गांवों में किसी भी त्यौहार, उत्सव, शादी-ब्याह, जन्मदिन पार्टी या राजनैतिक दलों की रैली व चुनाव प्रचारों में भरपूर मात्रा में प्रयोग हो रहा है। हमारे देश में शायद ही ऐसा कोई त्यौहार (धार्मिक व राष्ट्रीय) है जैसे—दशहरा, दीपावली,

होली, ईद, बकरीद, दुर्गा पूजा, गणेश उत्सव, 26 जनवरी एवं 15 अगस्त इत्यादि जो बिना लाउडस्पीकर के सम्पन्न होते हैं। ये लाउडस्पीकर उच्च आवाज के साथ साथ कानफोड़ू शोर दिन एवं रात पैदा करते हैं और शहरी एवं ग्रामीण वातावरण की ध्वनि को प्रदूषित करते रहते हैं। लाउडस्पीकर ध्वनि प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत है। आज के दौर में हमारे देश में कोई भी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक समारोह ऐसा नहीं है जहां इन लाउडस्पीकरों की संख्या उपस्थित न हो। इसके अलावा मन्दिरों, गिरिजाघरों, गुरूद्वारों व मस्जिदों में प्रार्थना एवं पूजा अर्चना के समय भी लाउडस्पीकरों का प्रयोग होने लगा है। इसके अतिरिक्त दुर्गा जागरण, भजन, कव्वाली, अखण्ड रामायण, कीर्तन, नौटंकी इत्यादि में भी लाउडस्पीकरों एवं एम्पलीफायरों का बहुतायत में प्रयोग होने लगा है जो ध्वनि प्रदूषण को बढ़ावा देते हैं।

(ii) **यातायात के साधन :**—आज की इस भागदौड़ की जिन्दगी में आगे बढ़ने की प्रतिस्पर्धा और रफ्तार ने व्यक्ति को इतना निकम्मा बना दिया है कि वह बिना वाहन के एक कदम भी नहीं चल सकता है। इसी का परिणाम है कि शहरों में दिन प्रतिदिन बढ़ती वाहनों की संख्या ने शहरी वातावरण को 60 से 70 प्रतिशत तक प्रदूषित कर दिया है। आदमियों के एक स्थान से दूसरे स्थान तक आने जाने के लिये यातायात के साधनों को माध्यम के रूप में इस्तेमाल करना पड़ता है, ये यातायात के माध्यम ट्रेन, ट्रक, बस, कार, टैम्पो, स्कूटर मोटर साइकिल एवं हवाई जहाज इत्यादि हैं। ट्रेनें—विद्युत चालित, डीजल एवं कोयले पर आधारित हैं इनके इंजन एवं उच्च क्षमता का हार्न अत्यधिक मात्रा में ध्वनि उत्पन्न करता है। ट्रक, बसें, टैक्सी, कार, स्कूटर एवं मोटर साइकिल भी पेट्रोलियम पदार्थों पर आश्रित होती है जो ध्वनि के साथ-साथ वायु प्रदूषण को भी बढ़ावा देती है और शहरी वातावरण को बुरी तरह से प्रदूषित कर रही है। इनके द्वारा उत्पन्न प्रदूषण जिसका उन प्रभावित इलाकों में रहने वाले लोगों पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त हवाई जहाजों द्वारा भी अत्यधिक तीव्रता की ध्वनि उत्पन्न की जाती है। हवाई अड्डों के आस पास रहने वाले लोगों को हवाई जहाज की ध्वनि से रात्रि के समय काफी परेशानी का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार यातायात के साधनों से वायु प्रदूषण के साथ-साथ ध्वनि प्रदूषण भी हो रहा है जिसका मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है।

(iii) **निर्माण स्थल :**—आजकल बढ़ती हुई आबादी को देखते हुए तीव्रगति से घरों, बहुमंजिला इमारतों एवं बाजारों का निर्माण हो रहा है जिसमें निर्माण कार्य हेतु अत्याधुनिक एवं बड़ी-बड़ी मशीनों जैसे कंकरीट मिक्सर, फ्लोर पालिशर, कटिंग मशीन, वैल्डिंग मशीन एवं विद्युत पम्पों व मोटरों से संचालित हो रहा है जिनसे भी ध्वनि प्रदूषित होती है।

(iv) **जेनरेटर्स :**—वर्तमान समय में व्यक्ति की जिन्दगी में विद्युत का बहुत बड़ा योगदान होने के साथ-साथ उसकी आश्रितता भी बढ़ी है इसलिए जब विद्युत की कटौती होती है तो विद्युत की आपूर्ति हेतु जेनरेटरों का प्रयोग अंधाधुंध हो रहा है दिन प्रतिदिन इनकी संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है, शहरों में बिजली चले जाने पर विद्युत की आपूर्ति हेतु छोटे व बड़े डीजल एवं पेट्रोल जेनसेटों का प्रयोग भी ध्वनि प्रदूषण का उत्तम स्रोत है। जेनरेटर ध्वनि के साथ-साथ वायु प्रदूषण का भी स्रोत है। इन जेनरेटरों से तीव्र ध्वनि के साथ साथ कच्चा तेल भी वातावरण में मिलता है जो किसी भी दृष्टिकोण से स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।

(v) **आडियो वीडियो यंत्रों द्वारा :**—आडियो वीडियो यंत्रों द्वारा शहरों एवं गांवों में आधुनिकता के चलते उच्च क्षमता के रेडियो, टी०वी० सेटों, म्यूजिक सिस्टम का अधिकाधिक प्रयोग भी ध्वनि प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत बन गया है।

ध्वनि प्रदूषण की माप

शोर की तीव्रता की माप लार्म बैरोमीटर से की जाती है। ध्वनि प्रदूषण की माप की यूनिट डेसीबल है जिसे सांकेतिक रूप में डी.बी. (dB) कहा जाता है। ध्वनि की तीव्रता की माप बेल है जिसे प्रसिद्ध वैज्ञानिक एलेक्जेण्डर ग्राहम बेल के नाम पर रखा गया है। बेल का 10वां भाग डेसीबल कहलाता है। डेसीबल पैमाने पर शून्य ध्वनि तीव्रता का वह न्यूनतम स्तर होता है जहां से ध्वनि हमारे कानों को महसूस होने लगती है। परंतु हमारे कान इस ध्वनि को सुन नहीं सकते हैं। ध्वनि प्रदूषण के लिये केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, द्वारा गठित कमेटी ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986 के

अंतर्गत कुछ मानदण्ड निर्धारित किए हैं। इन मानदण्डों के अनुसार ध्वनि के स्तर को विभिन्न क्षेत्रों के आधार पर वर्गीकृत किया गया है और दिन व रात में ध्वनि की अधिकतम सीमा का निर्धारण किया गया है।

तालिका 1- ध्वनि के लिये निर्धारित मानक (वायु के आधार पर)

क्षेत्र श्रेणी	क्षेत्रों का विवरण	ध्वनि की निर्धारित सीमा दिन के समय	डेसीबल(dB) रात्रि के समय
ए	औद्योगिक क्षेत्र	75	70
बी	व्यावसायिक क्षेत्र	65	55
सी	आवासीय परिसर	55	45
डी	शान्त क्षेत्र	50	40

नोट—

1. दिन के समय का निर्धारण सुबह 6 बजे से रात्रि 9 बजे तक निर्धारित किया गया है।
2. रात्रि का समय रात्रि 9 बजे से सुबह 6 बजे के मध्य निर्धारित किया गया है।
3. शांत क्षेत्र उन स्थानों को कहते हैं जिनके चारों तरफ 100 मी० तक किसी भी प्रकार का ध्वनि विस्तारक यंत्र न लगा हो ऐसे स्थान हैं अस्पताल, स्कूल, विद्यालय, कचहरी इत्यादि।
4. सम्मिलित क्षेत्र ऐसे स्थानों को कहते हैं जो ऊपर दी गई सारणी में वर्णित क्षेत्रों के अंतर्गत न आते हों इनके लिए मानक निर्धारित कमेटी द्वारा बनाए जाते हैं।

तालिका 2-ध्वनि की तीव्रता या वेग विभिन्न पदार्थों में

क्र० सं०	पदार्थ	वेग (मी०/से०) में
1	वायु (सामान्य ताप पर)	343
2	वायु (20० से० ताप पर)	331
3	हीलियम	1005
4	हाइड्रोजन	1300
5	जल	1440
6	समुद्री जल	1560
7	लोहा एवं इस्पात	=5000
8	सीसा	=4500
9	एल्युमिनियम	=5100
10	कठोर लकड़ी	=4000

तालिका 3-पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम-1986 के अंतर्गत निर्धारित मानक के अनुसार ध्वनि सीमा का निर्धारण यातायात के साधनों के लिए (7.5 मी० दूरी से डेसीबल में)

क्र० सीमा सं०	वाहन का प्रकार	निर्धारित ध्वनि (डेसीबल) में
1.	मोटर, स्कूटर, तिपहिया वाहन	80
2.	यात्री कार	82
3.	यात्री एवं व्यावसायिक वाहन (क्षमता चार मीट्रिक टन)	85
4.	यात्री एवं व्यावसायिक वाहन (क्षमता 4 से 12 मीट्रिक टन)	89
5.	यात्री एवं व्यावसायिक वाहन (क्षमता 12 मीट्रिक टन से अधिक)	91

तालिका 4 -घरेलू उपकरणों एवं निर्माण कार्य स्थल उपकरणों के लिये निर्धारित ध्वनि सीमा

क्र० सं०	घरेलू एवं निर्माण उपकरणों की श्रेणी	ध्वनि निर्धारण सीमा (डेसीबल) में
1.	एयर कंडीशनर	68
2.	कूलर	60
3.	रेफ्रिजरेटर	40
4.	गीजर, जेनरेटर्स घरेलू उपयोग हेतु	85-90
5.	रोजर, फ्रंट लोडर, कंक्रीट मिक्सचर, स्वचालित क्रेन्स, वाइबरेटर्स	76

तालिका 5- ध्वनि उत्पादन के विभिन्न स्रोत एवं उनकी ध्वनि क्षमता

क्र० सं०	स्रोत	ध्वनि तीव्रता (डेसीबल dB) में
(1)	(2)	(3)
1.	सुनने की शुरुआत	0
2.	फुसफुसाहट (1.25 मीटर से)	10
3.	सामान्य फुसफुसाहट (1.75 मीटर)	20
4.	दीवार घड़ी (1 मीटर पर)	30
5.	बेडरूम/लाइब्रेरी	40
6.	सामान्य कमरा/शान्त आफिस	50
7.	वैक्यूम क्लीनर, सामान्य वार्तालाप (1 मीटर पर) हल्का ट्रेफिक	60

(1)	(2)	(3)
8.	एअर कंडीशनर (6 मीटर पर), टेलीफोन वार्तालाप, सामान्य ट्रेफिक, हल्का शोर (30 मीटर पर)	70
9.	व्यस्त कार्यालय, कूड़ा करकट उठाने वाली मशीन	80
10.	भारी ट्रेफिक, रेलगाड़ी, मोटरसाइकिल (8 मी० से), डीजल ट्रक (15 मीटर पर), जेनरेटर्स	90
11.	भारी इंजीनियरिंग वर्कशाप, प्रेस	100
12.	आरा मशीन, मोटरकार का पावर हार्न (6.5 मीटर पर), इस्पात पुल पर रेल, जेट विमान की उड़ान (3.50 मीटर)	110
13.	रॉक संगीत, डिस्कोथेक, कपड़ा मिल, स्वचालित हार्न (1 मीटर पर), साइलेंसर रहित मोटर साइकिल व स्कूटर	120
14.	उच्च क्षमता का रॉक संगीत	130
15.	जेट विमान का उड़ना व उतरना	140
16.	प्रोपेलर विमान का उड़ना व उतरना	150
17.	रॉकेट इंजन का छूटना, विस्फोटक सामग्री का फटना	160
18.	टर्बोजेट विमान एवं अंतरिक्ष रॉकेट का छूटना	170
19.	रेमजेट विमान व अंतरिक्ष रॉकेट का छूटना	180

ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव

हमारे शरीर में कान ही ऐसे अंग हैं जो ध्वनि को सुनते हैं एवं उसे महसूस करते हैं। विभिन्न प्रकार की ध्वनियां हमारे कानों पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में प्रभाव डालती हैं। इसके घातक प्रभाव भी होते हैं। ध्वनि प्रदूषण का मानव जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। ध्वनि प्रदूषण व्यक्ति की कार्य क्षमता नींद एवं श्रवण शक्ति को भी प्रभावित करती है। ध्वनि प्रदूषण से पड़ने वाले प्रमुख प्रभाव निम्नवत हैं—

1. श्रवण शक्ति का ह्रास (अस्थाई अथवा स्थाई)
2. श्रवण शक्ति की क्रियाविधि का प्रभावित होना
3. वार्तालाप में व्यवधान
4. नींद में व्यवधान
5. घबराहट व बेचैनी
6. कार्यक्षमता का प्रभावित होना याददाश्त में कमी
7. मानसिक क्षमता का प्रभावित होना
8. रक्तचाप में वृद्धि, धमनियों पर प्रभाव
9. आचार एवं व्यवहार में परिवर्तन
10. तंत्रिका तंत्र एवं पाचन तंत्र का प्रभावित होना

विश्व स्वास्थ्य संगठन के ध्वनि प्रदूषण के बढ़ते प्रभावों को ध्यान में रखते हुए सुरक्षा की दृष्टिकोण से आवासीय परिक्षेत्रों में ध्वनि की तीव्रता दिन के समय 55 डेसीबल तथा रात्रि के समय 45 डेसीबल निर्धारित की है इसमें ऊपर की क्षमता की ध्वनि को आवासीय परिसर के लिए प्रदूषण की श्रेणी में माना गया है। साधारणतया 50dB तक की ध्वनि हमारे कानों को खराब नहीं लगती है। सामान्यत: 80dB के ऊपर की ध्वनि प्रदूषण की श्रेणी में आती है। भारतीय मानक संस्थान (ISI) ने बंद स्थानों (indoor) एवं वातावरण के लिए ध्वनि की क्षमता को 55 डेसीबल तथा वाह्य वातावरण तथा खुले स्थानों के लिए 60 डेसीबल से अधिक की ध्वनि को ध्वनि प्रदूषण के अंतर्गत रक्खा है। 80 से ऊपर वाली ध्वनि में अधिक समय तक रहने से श्रवण दोष होने की सम्भावनाएं बढ़ जाती हैं। ये तो ध्वनि से होने वाले सामान्य प्रभाव है जो लगभग सभी मानवों एवं जीवधारियों पर सामान्य रूप से पड़ते हैं। ध्वनि प्रदूषण के अधिक प्रभाव ज्यादा समय तक तेज ध्वनि प्रदूषित वातावरण में रहने वाले व्यक्तियों की सहनक्षमता एवं व्यक्तियों की सहनशीलता पर पड़ता है। इसके अतिरिक्त ध्वनि प्रदूषण की अधिकतम समय सीमा को मनुष्य की उच्चतम ग्राहता सीमा का निर्धारण भी सारणी में व्यक्त किया गया है। जिसको आप नीचे वर्णित सारणी से आसानी से समझ सकते हैं।

तालिका 6–मनुष्य की अधिकतम ग्राहता ध्वनि सीमा

क्र० सं०	प्रतिदिन ग्राहता (घंटा/मिनट में)	अधिकतम सहन ध्वनि स्तर सीमा (डेसीबल में)
(1)	(2)	(3)
1.	8 घंटे	90
2.	6 "	92
3.	4 "	95
4.	3 "	97
5.	2 "	100

(1)	(2)	(3)
6.	1 घंटा 30 मिनट	102
7.	1 घंटा	105
8.	30 मिनट	110
9.	15 "	115
10.	7 "	120
11.	3 "	130
12.	1.5"	140
13.	1 "	145
14.	0.5-1 मिनट	150 से अधिक

तालिका 7-ध्वनि की तीव्रता का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

निर्धारित ध्वनि विस्तारक सीमा-वॉल्स हेली पब्लिक कान्ट्रेन्टएक्ट (Walsh Healy Public Contract Acts)

क्र. सं.	ध्वनि की तीव्रता (डेसीबल में)	मानव पर ध्वनि की तीव्रता का प्रभाव
1	2	3
1.	0	ध्वनि की शुरूआत
2.	40	कर्णप्रिय, वातावरण में सुविधा, कोई घातक प्रभाव नही
3.	80	तीव्र, अधिक समय तक रहने पर नकारात्मक प्रभाव
4.	110	बहरेपन की शुरूआत, कान के नाजुक अंगों की त्वचा को नुकसान
5.	120	असामान्य तीव्र शोर, पीड़ाजनक सहनशीलता पर आधारित रक्त चाप प्रभावित, धमनियों का सिकुड़ना, कोलेस्ट्राल में वृद्धि
6.	130	घबराहट, बेचैनी, उल्टी की स्थिति, समस्त प्रकार की कार्यविधियां प्रभावित
7.	140	कान में दर्द की समस्या, ध्वनि सहने की अधिकतम सीमा (परन्तु व्यक्तियों की सहनशीलता के आधार पर थोड़ी सी परिवर्तित)
8.	150	रक्तप्रवाह में परिवर्तन, उच्च रक्तचाप अधिक समय तक रहने पर त्वचा के जल जाने की सम्भावना, मानसिक अस्वस्थता एवं भावनात्मक अवरोध पैदा होना
9.	160	अल्प स्थाई बहापन परन्तु अधिक समय व्यतीत करने पर स्थायित्व की स्थिति
10.	170	अत्यधिक पीड़ाजनक कान में आंतरिक घाव, स्थायी नुकसान वापसी की सम्भावना कम
11.	180	बहुत अधिक कष्टकारी एवं पीड़ादायी स्थिति, शरीर के नाजुक अंगों एवं मस्तिष्क पर घातक एवं स्थायी प्रभाव
12.	190	अल्प समय में ही स्थायी बहरापन एवं हार्ट अटैक की स्थिति या अधिकतम उच्च रक्त चाप, अत्यधिक शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा जो अत्यंत कष्टकारी
13.	200 से अधिकतम	मृतयु की सर्वाधिक सम्भावना अन्यथा पागलपन की स्थिति

वैज्ञानिक अनुसंधान के नतीजों के अनुसार वातावरण में शोर की तीव्रता प्रत्येक 10 वर्षों में अपने स्तर से लगभग दोगुनी हो जाती है। भारत मे ध्वनि प्रदूषण में प्रतिवर्ष 4 प्रतिशत की दर से वृद्धि हो रही है जो आने वाले समय के लिए खतरनाक संकेत हैं।

ध्वनि प्रदूषण के दिनों दिन बढ़ते हुए खतरे एवं उनसे हानिकारक प्रभावों को कम करने के लिए भारत में कई कानूनों का निर्माण संविधान के अंतर्गत किया गया है। इस दिशा में विश्व के अन्य देशों में भी ध्वनि प्रदूषण को कम करने के लिए बहुत से कानून बनाए गए हैं। ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम के लिए सबसे पहले इंग्लैंड में सन 1960 में ध्वनि निवारण कानून-1960 का निर्माण किया गया जिसमें लाउडस्पीकर के उपयोग एवं समय सीमा का निर्धारण है। इसके बाद यू. एस. ए. (संयुक्त राज्य अमेरिका) में ध्वनि प्रदूषण एवं निवारण कानून-1970 आया जिससे ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण पर जोर दिया गया है। इसके अलावा भारतीय कानून प्रक्रिया में भी ध्वनि प्रदूषण के नियंत्रण एवं ध्वनि प्रदूषण शिकायत सम्बधी विवादों के निवारण के लिए अनेक कानून बनाए गए है जो निम्नवत है :—

- भारतीय दण्ड संहिता—खण्ड 268, 290, 291
- आपराधिक दण्ड प्रक्रिया—खण्ड 133

- भारतीय उद्योग नियम—1948 खण्ड 89 एवं 90
- मोटर वाहन अधिनियम—1988 खण्ड 20, 21J, 41, 11, 70, 91, 111A
- केन्द्रीय मोटर वाहन नियम—1989 खण्ड 119 एवं 120
- सेक्सन 119 दि हार्न
- सेक्सन 120—साइलेंसर

ध्वनि प्रदूषण पर नियंत्रण एवं उससे हो रहे हानिकारक प्रभावों एवं जनमानस में इसके प्रति जलचेतना जागृत करने में इन नियमों एवं कानूनों की महत्वपूर्ण भूमिका है इन से ध्वनि प्रदूषण के नियंत्रण में काफी मदद मिली है।

ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण

भारत सरकार के पर्यावरण मंत्रालय के केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने वर्ष 1989 में एक तकनीकी समिति का गठन किया जिसने ध्वनि प्रदूषण से होने वाले नुकसान एवं इसके नियंत्रण के नियमों पर अपने सुझाव प्रस्तुत किए। इस समिति ने ध्वनि उत्पन्न करने वाले संसाधनों का वर्गीकरण जैसे अधिक शोर वाले संयंत्र व स्रोत, घरेलू यंत्रों से शोर, यातायात के साधनों से शोर एवं औद्योगिक इकाइयों में शोर के स्तर का मूल्यांकन किया और उनकी रोकथाम के सुझाव दिए। ध्वनि प्रदूषण के नियंत्रण के लिए अधोलिखित तथ्यों पर सावधानीपूर्वक एवं गम्भीरता से प्रयास किए जाए तो ध्वनि प्रदूषण को काफी कम किया जा सकता है। लाउडस्पीकरों के प्रयोग को काफी हद तक प्रतिबंधित कर देना चाहिए जब तक अत्यंत आवश्यक न हो इनके इस्तेमाल की अनुमति नहीं देनी चाहिए। इनकी ध्वनि क्षमता एवं समय सीमा का निर्धारण भी उचित प्रशासनिक अधिकारी द्वारा निर्धारित होना चाहिए। इसका इस्तेमाल अस्पताल, शिक्षण संस्थान, कोर्ट इत्यादि से 500 मी. की दूरी पर होना चाहिए या इन क्षेत्रों में इसका प्रयोग पूर्णत: प्रतिबंधित होना चाहिए।

- जन सामान्य को घरों में रेडियो टी. वी., टेप एवं अन्य ध्वनि विस्तारक यंत्रों का प्रयोग कम से कम एवं सीमित आवाज पर करना चाहिए ताकि आवासीय ध्वनि प्रदूषण से बचा जा सके।
- स्वचालित मोटर वाहनों के ड्राइवरों को हार्न का प्रयोग उचित समय पर एवं कम से कम करना चाहिए।
- वाहनों में साइलेन्सरों, टायरों में हवा का दबाब एवं इंजन का रखरखाव व देखभाल समय से होनी चाहिए।
- रात्रिकालीन सामाजिक, धार्मिक ध्वनि को प्रतिबंधित करना।
- औद्योगिक (लघु, गृह, मध्यम एवं वृहद) इकाइयों को शहरी आवासीय क्षेत्र से कम से कम 5 किमी की दूरी पर स्थापित करना चाहिए।
- विमानों को विशेष ढाल पर उतारने एवं चढ़ाने से शोर की तीव्रता कम की जा सकती है साथ ही जेट विमानों में शोर अवशोषक साधनों का प्रयोग भी लाभदायक रहेगा।
- औद्योगिक इकाइयों में मशीनों एवं कलपुर्जों की देखभाल व रखरखाव सामान्य रूप से नियमित होना चाहिए। मशीनों में ग्रीस एवं आयलिंग समय से होनी चाहिए।
- औद्योगिक इकाइयों में शिफ्टों में कार्य होना चाहिए ताकि श्रमिकों पर ध्वनि का प्रभाव कम पड़े।
- हेलीकाप्टरों, हवाई जहाजों एवं जेट विमानों को निर्धारित ऊंचाई पर ही उड़ना चाहिए। ताकि कोई आकस्मिक घटना न हो एवं इनसे उत्पन्न तीव्र ध्वनि से बचाव किया जा सके।
- पटाखों का प्रयोग कम से कम करना चाहिए। तेज आवाज वाले पटाखों को पूर्णत: प्रतिबंधित कर देना चाहिए।
- फैक्टरी एवं निर्माण कार्य एवं भीड़ वाले क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों को इयर प्लग, इयरमफ का प्रयोग करना चाहिए।
- मकान के रंग को हल्का हरा या हल्का नीला पुताई करवा कर भी ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव को कम किया जा सकता है।
- सड़कों के किनारें पेड़ों को पंक्तियों में लगाकर ध्वनि प्रदूषण को कम किया जा सकता है।
- कानूनी नियमों को सख्ती से लागू करके एवं दण्ड प्रावधान के द्वारा भी ध्वनि प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

- ध्वनि प्रदूषण संबंधी जानकारी एवं पर्यावरण चेतना द्वारा जनसामान्य को इसके प्रभावों एवं नियंत्रण में भागीदारी के बारे में विस्तार से बताना चाहिए। ध्वनि प्रदूषण का निवारण एक अत्यंत कठिन कार्य है क्योंकि ध्वनि प्रदूषण हमारी उपभोक्तावादी एवं भौतिकवादी जीवन शैली के अंतिम उत्पाद का एक रूप है इसलिए इसके नियंत्रण एवं इसके प्रभावों के निवारण के लिए मनुष्यों को अपनी जीवन शैली में व्यापक परिवर्तन करने पड़ेंने जो आसान कार्य नहीं है फिर भी इस दिशा में यदि थोड़ी से भी कोशिश की जाए तो हमें इस क्षेत्र में बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हो सकती है। इसके अलावा निम्नलिखित मुख्य कार्य के द्वारा भी ध्वनि प्रदूषण से छुटकारा पाया जा सकता है।
- ध्वनि को उसके उत्पादित (स्रोत) स्थान पर ही नियंत्रित करना सबसे सरल एवं सीधा रास्ता है।
- ध्वनि प्रदूषण के फैलने की दिशा पर नियंत्रण करके भी इसके प्रभावों को कम किया जा सकता है।
- ध्वनि प्रदूषण से बचाव के साधन जैसे इयर प्लग, इयर कफ इत्यादि का प्रयोग करके।
- रेलगाड़ी द्वारा उत्पन्न शोर को बैलास्ट विहीन रेल पथों के निर्माण द्वारा दूर किया जा सकता है।
- ध्वनि प्रदूषण से ग्रसित सड़कों एवं भवनों को ध्वनि निरोधी बनाना चाहिए।
- वैल्डिग से होने वाले शोर को रिवेरिंग का प्रचलन कर कम किया जा सकता है।
- होडिंग, जनसंचार माध्यमों एवं लघु फिल्मों से ध्वनि के घातक परिणामों से आम नागरिकों को अवगत कराना चाहिए
- बच्चों में प्रदूषण के प्रति गम्भीरता पैदा करना एवं निदान के उपाय बताना।
- दुपहिया वाहन चालकों को हेलमेट लगाना चाहिए ताकि वह इस प्रदूषण के प्रभाव से काफी हद तक बच सकें।

वरिष्ठ वैज्ञानिक, पर्यावरण एवं विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

द्विभाषिक सॉफ्टवेयरों में अनुकूलन क्षमता

-डॉ. राजेश्वर गंगवार

बात लगभग 3 वर्ष पहले शुरू हुई, बैकों से कहा गया कि वे अपनी तिमाही रिपोर्ट रिज़र्व बैंक को फ्लॉपी पर भेजा करें, बैंको में हिंदी में काम करने के लिए वर्ड प्रोसेसिंग के अलग-अलग सॉफ्टवेयर हैं, अत: बैंकों की भेजी फ़लॉपी हमारे यहां नहीं खुली, क्योंकि हमारे ऑफिस में आकृति ऑफिस का ही प्रयोग किया जाता है, कुछ बैंकों ने हमारी कठिनाई को समझा और अपने प्रधान कार्यालय में एक पी. सी. पर आकृति ऑफिस लगवा लिया, लेकिन सभी बैंकों ने ऐसा नहीं किया । अत: उन्हें सुझाव दिया गया कि वे एम. एस. ऑफिस (एक्सेल) में रिपोर्ट तैयार करें, अर्थात् आंकड़े टाइप करें और केवल स्तंभ संख्या दे दें, स्तंभ के शीर्ष की विषय-वस्तु को टाइप न करें । इस तैयार की गयी फ़्लॉपी से हमारा काम चल रहा है । लेकिन विचारणीय बात यह है कि सभी बैंक उसी सॉफ़्टवेयर का प्रयोग क्यों करें, जिसका प्रयोग रिज़र्व बैंक कर रहा है, उन्हें अपनी पसंद का सॉफ्टवेयर चुनने की आज़ादी क्यों न हो अथवा यह विवशता क्यों हो कि हिंदी की तिमाही प्रगति रिपोर्ट के लिए भी रोमन फॉण्ट का प्रयोग किया जाए। एपीएस, लीप, अक्षर आदि में तैयार की गयी फाइल हमारे यहां आकृति में क्यों नहीं खुलनी चाहिए?

एक अन्य उदाहरण इंटरनेट पर हिंदी के विभिन्न पोर्टलों पर ई-मेल की सुविधा और समाचारों का है, इस आलेखकार ने अनेक बार कोशिश की कि किसी समाचार किसी अंश का ही प्रिंट लिया जाए, लेकिन प्रिंटर का selection का विकल्प हिंदी के चुने हुए अंश के लिए काम नहीं करता, लेजर प्रिंटर का यह अनुभव है । हमें पूरा समाचार, जो कई पृष्ठ का हो सकता है, उसके अनावश्यक अंशों, विज्ञापन आदि के साथ प्रिंट करना पड़ता है । अगर हम अंग्रेजी के मार्क किये हुए (selected) अंश को प्रिंट कर सकते हैं, तो हिंदी के selected अंश को क्यों नहीं?

इन प्रश्नों का उत्तर यही है कि हिंदी में काम करने के लिए प्रयोग में लाये जा रहे विभिन्न सॉफ्टवेयर (चाहे वे वर्ड प्रोसेसिंग के हों, या नेवटकिंग के) परस्पर अनुकूल या सुसंगत नहीं है, इसी तरह समाचारों के लिए प्रयुक्त सॉफ्टवेयर भी प्रिंटर के सॉफ्टवेयर से पूरी तरह संगत नहीं है। इस बात को स्पष्ट करने के लिए सॉफ्टवेयर की अनुकूलता (compatibility) की संक्षिप्त चर्चा उचित् रहेगी।

अनुकूलन क्षमता या सुसंगतता से अभिप्राय कंप्यूटर के किसी अंग या किसी सॉफ्टवेयर के किसी अन्य अंग या सॉफ्टवेयर या प्रोग्राम के साथ कार्य करने या उसके अनुकूल होने से है। यह क्षमता प्राय: उत्पाद तैयार करते समय ही निर्मित की जाती है, तो कुछ मामलों में किसी ड्राइव या फिल्टर आदि से प्राप्त की जाती है। उदाहरण के लिए नेटवर्क इंटरफेस कार्ड नेटवर्क सॉफ्टवेयर के साथ मिलकर काम करता है। इसके लिए ड्राइव का भी इस्तेमाल किया जाता है। प्रत्येक अडाप्टर के लिए ड्राइव बनाने के स्थान पर एक या अधिक जनरिक ड्राइव इंटरफेस निर्मित किए जाते हैं। इसके बाद इस जनरिक इंटरफेस के लिए अपने उत्पाद के इंटरफेस तैयार किए जाते हैं। सॉफ्टवेयर निर्माता किसी उत्पाद की विशेष बातों के लिए जनरिक ड्राइव अपनाता है। उदाहरण के लिए आकृति ऑफिस सॉफ्टवेयर एम. एस. ऑफिस की विशेषताओं को अपनाने के लिए जनरिक मोड में तैयार किया गया है। इस तरह आकृति ऑफिस पैकेज को एम. एस. ऑफिस के अनुकूल बनाया गया है।

अनुकूलन क्षमता होने से किसी पुर्जे या सॉफ्टवेयर में उन्हीं आदेशों (कमांडों) को समझने की सामर्थ्य पैदा हो जाती है, जिन कमांडों को कोई दूसरा पुर्जा या सॉफ्टवेयर समझता है और उसी तरह की प्रतिक्रिया या कार्य करता है। इस तरह उनमें परिचालन संबंधी भेद (अंतर) नहीं रहता और कार्य करने वाले को दोनों प्रोग्राम एक जैसे लगते हैं। अनुकूलन क्षमता होने पर दो कंप्यूटर हार्डवेयर सॉफ्टवेयर एक जैसा कार्य करते हैं। सॉफ्टवेयर में अनुकूलन क्षमता से अभिप्राय यह है कि दो या अधिक सॉफटवेयर कंप्यूटर पर एक जैसा कार्य (इन्पुट और आउटपुट दोनों की दृष्टि से) कर सकते हैं। सॉफ्टवेयर की अनुकूलन क्षमता से यह भी अभिप्राय है कि दोनों प्रोग्राम किस हद तक साथ कार्य कर

सकते हैं या डाटा शेयर कर सकते हैं। ऐसा होने पर दोनों प्रोग्राम एक दूसरे की फाइल शेयर कर सकते हैं और डाटा अंतरित कर सकते हैं।

अब हमें देखना चाहिए कि अंग्रेजी के साथ हिंदी में काम करने के लिए बनाए गए द्विभाषिक सॉफ्टवेयर परस्पर कितनी अनुकूलता से कार्य करते हैं। हम सभी जानते हैं कि वर्ड प्रोसेसिंग के लिए बनाए गए द्विभाषी सॉफटवेयर परस्पर अनुकूल नहीं है । किसी एक सॉफ्टवेयर में तैयार की गई फाइल किसी दूसरे साफ्टवेयर में नहीं खुलती । कतिपय द्विभाषिक सॉफ्टवेयरों में कुछ चुनिंदा सॉफ्टवेयरों की फाइल खोलने की सुविधा प्रदान की गई है। किंतु यह सुविधा इन दोनों सॉफ्टवेयरों की अनुकूलता का परिणाम नहीं है यानी वे सॉफ्टवेयर तो अनुकूल नहीं हैं, किंतु फाइलें खुल जाती हैं। इसके लिए या तो सॉफ्टवेयर में ही कनवर्टर की सुविधा दे दी गई है अथवा अलग से कनवर्टर सॉफ्टवेयर के इस्तेमाल से फाइलें खोली जाती हैं। मॉडयुलर इन्फो टेक प्रा.लि. ने हाल ही में एक नया सॉफ्टवेयर निकाला है *अंकुर प्राफेशनल*। इस सॉफ्टवेयर में ही इस तरह की परिवर्तन की सुविधा दे दी गई है। लेकिन इस सॉफ्टवेयर को किसी अन्य सॉफ्टवेयर के साथ इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। यह सॉफ्टवेयर टी एस आर (टर्मिनेट ऐंड स्टे रेज़िडेंट) प्रोग्राम का इस्तेमाल करता है। जब तक यह प्रोग्राम चालू रहता है, तब तक किसी अन्य सॉफ्टवेयर से न तो काम कर सकते हैं और न ही हिंदी में किसी अन्य प्रोग्राम में तैयार की गयी फाइल का प्रिंट ले सकते हैं। अगर टॉगल का इस्तेमाल करके काम किया जा रहा हो, तब तो कठिनाई और भी बढ़ जाती है, क्योंकि अन्य प्रोग्राम में कार्य करने के लिए पहले टॉगल को हटाना पड़ता है। ये कठिनाइयां द्विभाषी सॉफ्टवेयर को अपनाने में झिझक पैदा करती हैं। स्पष्ट है कि ये प्रोग्राम अन्य द्विभाषिक प्रोग्रामों के अनुकूल नहीं हैं। वैसे इस सॉफ्टवेयर में यह विशेषता है कि *टूल बार* हिंदी में भी है। किसी प्रतीक चिन्ह (आइकन) पर माउस ले जाने पर उसके बारे में हिंदी में लिखा दिखाई देता है। अब कठिनाई यह है कि जो कार्यालय अपने कंप्यूटरों में कोई अनय सॉफ्टवेयर लगवा चुका है, वह पहले के सॉफ्टवेयर को छोड़कर ही इसका इस्तेमाल कर सकता है।

द्विभाषिक सॉफ्टवेयर अनुकूल क्यों नहीं हैं?

अब यह प्रश्न स्वाभाविक है कि द्विभाषी सॉफ्टवेयरों में अनुकूलता क्यों नहीं है? हम सभी जानते हैं कि कंप्यूटर केवल '0' और '1' की भाषा ही समझता है। कंप्यूटर को जो भी आदेश दिये जाते हैं, कंप्यूटर पर जो भी कार्य किए जाते हैं (भाषा, आंकड़ों के संसाधन से लेकर चित्र बनाने और फोटो खींचने तक), वे सभी कार्य '0' और '1' की विभिन्न आवृत्तियों के क्रम से किए जाते हैं। किसी वर्ण, चिन्ह या आकृति के लिए '0' और '1' के निर्धारित क्रम का प्रयोग किया जाता है। क्रम निर्धारण के लिए पहले आस्की कूट, फिर आस्की एक्सटेंडेड, इस्की और अब यूनिकोड का भी प्रयोग हो रहा है। उत्तर भारत की भाषाओं के लिए इस्की कूट का प्रयोग ही अधिक उपयुक्त माना गया है। किंतु इसे दक्षिण भारत की भाषाओं अर्थात् तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़ के लिए अधिक उपयुक्त नहीं बताया जाता। यूनिकोड से बहुत आशा की जाती है, किंतु यूनिकोड भारतीय भाषाओं के सॉफ्टवेयर बनाने के लिए अभी भी व्यापक रूप से प्रचलन में नहीं आया है। (यूनिकोड में देवनागरी के वर्णों, मात्राओं और चिन्हों के लिए निर्धारित कूटों की सारणी अनुबंध में दी गई है। अंग्रेजी के लिए भी आस्की, आस्की एक्सटेंडेड और यूनिकोड, तीनों का ही प्रयोग हो रहा है । फिर भी अंग्रेजी के सॉफ्टवेयरों में अनुकूलता की कठिनाई नहीं है, कम से कम एक ही प्लेटफार्म पर इस्तेमाल होने वाले विभिन्न सॉफ्टवेयरों के संबंध में तो नहीं ही है। यहां तक कि किसी सॉफ्टवेयर को बाज़ार में उतारने से पहले उसकी अनुकूलता जांच की जाती है और इस कार्य के लिए अनेक अजेंसिया भी हैं। यह हो सकता है कि डॉस के सॉफ्टवेयर विंडोज के सॉफ्टवेयरों से अनुकूलता न बिठा पाएं, लेकिन विंडोज पर प्रचलित सॉफ्टवेयर एक दूसरे के अनुकूल हैं। इसका कारण है कि रोमन लिपि के सभी वर्णों और चिन्हों के लिए एक निश्चित मानक है, एक निश्चित कैरेक्टर सेट निर्धारित है। उदाहरण के लिए रोमन के कैपिटल ए, बी और सी (A, B & C) के लिए सभी सॉफ्टवेयर आस्की या एक्सटेंडेड आस्की का क्रमशः '65', '66' और '67' कूट अथवा लोअर कैप (a, b और c) के लिए क्रमशः '97', '98' और '99' कूट ही अपनाते हैं। प्रोग्राम चाहे सी ++ में हो, या विजुअल बेसिक में या फॉक्स प्रो में, कैरेक्टर सेट नहीं बदलता। हिंदी के लिए बनाये गये साफ्टवेयरों में यह बात नहीं अपनायी गयी। वर्तमान में भिन्न-भिन्न योजनाएं प्रचलन में हैं। आस्की में तैयार किये गये विभिन्न साफ्टवेयरों की योजनाओं के बारे में यहां दी गयी सारणी से यह बात स्पष्ट हो जायेगी। सारणी में L5 अंग्रेजी की कूट योजना है, L1) *भारतभाषा की है,* V1, V2 और V3 अलग-अलग द्विभाषिक सॉफ्टवेयरों में देवनागरी के वर्णों के लिए प्रयुक्त योजनाएं हैं :

L5	ASCII	L1	V-1	V-2	V-3
A	65	अ	180	163	123
B	66	ॣ	112	109	166
C	67	छ	99	137	159
a	97	ा	124	182	180
b	98	ॖ	92	154	65
c	99	ॄ	162	82	112

इस सारणी से यह स्पष्ट है कि देवनागरी के विभिन्न वर्णों के लिए अलग-अलग सॉफ्टवेयरों में अलग-अलग केरेक्टर सेट इस्तेमाल किए गए हैं, 'अ' अक्षर के लिए ही कोई तो आस्की की 180 वैल्यू ले रहा है, तो कोई 163 या 123, ऐसी स्थिति में V1 में तैयार की गयी फाइल जब V.2 में या V3 में योजना वाले सॉफ्टवेयर में खोली जायेगी तो कैरेक्टर सेट (कूट) की भिन्नता के कारण सही वर्ण नहीं दिखाएगी और अजीबोगरीब चिन्हों के समूह दिखाई देंगे, जिन्हें अंग्रेजी में junk कहते हैं । सही रूप में फाइल खोलने के लिए फिल्टर या कनवर्टर आवश्यक हो जाता है, जो पहले सॉफ्टवेयर में प्रयुक्त वैल्यू को दूसरे सॉफ्टवेयर की वैल्यू में बदल सके । लेकिन फिल्टर तैयार करना भी कोई आसान नहीं है । क्योंकि वेंडर अपने कैरेक्टर सेट की योजना दूसरे को बताना ही नहीं चाहता । यह बात निजी सॉफ्टवेयर निर्माताओं तक ही सीमित नहीं है, सरकार के विभागों में भी मतभेद है । प्रत्येक अपनी बात को ही सही समझता है और सोचता है, बाजार में उसका ही बर्चस्व स्थापित हो जाने पर दूसरा अपने आप अतीत की चीज हो जाएगा, यहां तक कि सी-डैक का जिस्ट इस्की, यूनिकोड, इस्फॉक और इंस्क्रिप्ट के साथ काम करता है, लेकिन अन्य कंपनियों के सॉफ्टवेयरों से तैयार की गई फाइलें जिस्ट में नही खुलती और न ही लिप्यंतरण होता , जिस्ट से लिप्यंतरण तभी हो पाता है, जब फाइल मूलत: जिस्ट में (किसी एक लिपि में) तैयार की जाये, तभी दूसरी लिपी में उसे बदला जा सकता है।

अनुकूलता न होने से कठिनाइयां और हानियां

द्विभाषी सॉफ्टवेयरों की अनुकूलता न होने पर सबसे बड़ी कठिनाई तो एक सॉफ्टवेयर की फाइल के दूसरी में न खुलने की है । इसका निराकरण संस्था के अंतर्गत तो यही है कि सभी कंप्यूटरों पर एक ही सॉफ्टवेयर लोड किया जाए, ताकि एक कंप्यूटर पर तैयार की गई फाइल दूसरे कंप्यूटर पर खुल सके । लेकिन यह समस्या का पूर्ण समाधान नहीं है, इससे बाजार में प्रतिस्पर्धा का अभाव होने से गुणवत्ता पर असर पड़ेगा । हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का बाजार बहुत बड़ा है । इस बड़े बाजार में अपने सॉफ्टवेयर बेचने के उद्देश्य से हाल ही में माइक्रोसॉफ्ट ने अपने विंडोज एनटी के लिए हिंदी का इंटरफेस विकसित किया है । सी-डैक बहुभाषी वर्ड प्रोसेसर तैयार कर रहा है । ऐपल ने भारतीय भाषाओं के किट की घोषणा की है । आइ बी एम ने हिंदी पी सी डॉस विकसित करने की घोषणा की है । लेकिन इस प्रश्न का उत्तर अभी तक नहीं मिला है कि क्या ये सभी एकसमान (uniform) कैरेक्टर सेट इस्तेमाल करेंगे ? क्या ये देवनागरी के लिए निर्धारित यूनिकोड का इस्तेमाल करेंगे ?

हम सभी जानते हैं कि 80% सॉफ्टवेयर मूलत: अमरीका में बनते हैं और परिचालन प्रणालियों के मामले में तो शत-प्रतिशत अमरीकी वर्चस्व है, लेकिन प्रयोक्ता तो अमरीका से बाहर अधिक है, इसलिए यह आवश्यक है परिचालन प्रणालियों और सॉफ्टवेयरों का स्थानीयकरण किया जाए । विदेशी कंपनियां इस ओर बढ़ रही हैं । लेकिन क्या वे भारतीय लिपियों के लिए निर्धारित कैरेक्टर सेट का इस्तेमाल कर रही हैं ? नहीं, ऐसा दावा अभी तक किसी ने नहीं किया है । कोई कंपनी कर भी नहीं सकती, क्योंकि हिंदी के लिए कैरेक्टर सेट का मानक संलेख (प्रोटोकोल) यूनिकोड के अतिरिक्त अन्य कूट योजना के संबंध में अभी तक निर्धारित ही नहीं किया गया है । ये कंपनियां भी शायद अपने-अपने ढंग से कैरेक्टर सेट निर्धारित करके साफ्टवेयर विकसित कर रही हैं, जिसका परिणाम यह होगा कि कोई भी कार्यालय अपने यहां एक ही सॉफ्टवेयर को अपनाने पर मजबूर हो जाएगा, लेकिन दूसरे कार्यालय में प्रयुक्त भिन्न सॉफटवेयरों से तैयार की गयी फाइल को अपने यहां कनवर्टर की सहायता के बिना नहीं खोल सकेगा।

इससे यह कठिनाई भी होगी कि हम अपने उत्कृष्ट साहित्य को इंटरनेट पर अपलोड करने के लिए किसी एक सॉफ्टवेयर पर ही निर्भर हो जाएंगे और ओले (Object Linking and Embedding) जैसी सुविधाओं का सही ढंग से उपयोग नहीं कर पायेंगे, अर्थात कार्य को विभाजित करके मिलाने के लिए भी उसी सॉफ्टवेयर पर निर्भर होंगे और जब कोई डाउनलोड करके प्रिंट लेना चाहेगा तो उसे उसी तरह की कठिनाई का सामना करना पड़ेगा, जिस तरह की कठिनाई इस समय समाचार के पृष्ठ को प्रिंट करने में होती है । यह

ठीक है कि हम बैंक के कर्मचारी हैं, बैंकर हैं । लेकिन हम मनुष्य पहले हैं, कुछ अन्य बाद में । हम पहले भारतीय है, बाद में बैंकर हैं, अत: जिन बातों को हम श्रेष्ठ समझते हैं, उनकी रक्षा के लिए भी हमें सजग रहना है । हमारे पास ज्योतिर्विज्ञान, ज्योतिष, गणित, योग, दर्शन, आयुर्वेद आदि का अकूत भंडार है, जो सिर्फ भारत की नहीं संपूर्ण मानवता की थाती है, जिसे अपनी भाषा और लिपि में अपलोड करना चाहिए और इस तरह करना चाहिए कि कहीं भी किसी को डाउनलोड करने या प्रिंट लेने में कठिनाई न हो । तब हम कह सकेंगे कि हम सिर्फ डाउनलोड करके नकल ही नहीं करते, हमारे पास भी कुछ है जो दूसरों के लिए उपयोगी है।

यह प्रसन्नता की बात है कि बैंकों में डाटा प्रोसेसिंग का कार्य शुरू हो गया है। अत: सॉफ्टवेयर निर्माता या आपूर्तिकर्ता से यह कहना आवश्यक है कि उसका सॉफ्वेयर अन्य साफ्टवेयरों के अनुकूल या सुसंगत हो । वर्तमान में बैंक नेटवर्किंग की प्रणाली तेजी से अपना रहे हैं । देवनागरी के लिए कैरेक्टर सेट का प्रोटोकोल निर्धारित न होने पर जो कठिनाई वर्ड प्रोसेसिंग के लिए के लिए हो रही है, वह कठिनाई नेटवर्क पर भी काम करने में सामने आयेगी । इतना ही नहीं, 'जब कहीं भी और कभी भी बैंकिंग' की संकल्पना बैंक अपनाएंगे तो या तो अंग्रेज पर शत-प्रतिशत निर्भर होंगे अथवा हिंदी के लिए किसी एक ही सॉफ्टवेयर को अपनाने के लिए बाध्य होंगे।

इन कठिनाइयों और संभावित हानियों से बचने के उपाय क्या हैं ? हम समझते हैं, इसका एक ही उपाय है कि देवनागरी में सॉफ्टवेयर विकसित करने के लिए मानक संलेख (प्रोटोकोल) तैयार किया जाए और सभी सॉफ्टवेयर निमार्ताओं से कहा जाए कि वे कैरेक्टर सेट का मानक संलेख (प्रोटोकोल) ही अपनायें। देश में विभिन्न भाषाओं के प्रचलन और 18 भाषाओं को संविधान में स्वीकृति से यह और भी आवश्यक है कि प्रत्येक भाषा को उसकी लिपि में ही कंप्यूटर पर कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए कैरेक्टर सेटों के प्रतिमान तय किए जाएं। अच्छा तो यह होता कि इस तरह के प्रतिमान तय करना हमारी प्राथमिकता होती। अब तक के अनुभव और कठिनाइयों को देखते हुए आवश्यक है कि भारत सरकार, विभिन्न कंपनियां, बैंकिंग उद्योग और सॉफ्टवेयर निर्माता कंपनियां साथ मिल-बैठकर हिंदी तथा अन्य भाषाओं के लिए कैरेक्टर सेट के प्रतिमान तय करें और सॉफ्टवेयर निर्माताओं से कहा जाए कि वे अनिवार्य रूप से उन्हीं प्रतिमानों को लेकर सॉफ्टवेयर विकसित करें। लेकिन यह कौन कह सकता है ? निश्चित ही यह अधिकार भारत सरकार को ही है । अत: इस बारे में भारत सरकार को ही पहल करनी होगी। सभी साफ्टवेयर निर्माताओं से कहना होगा कि वे केवल निर्धारित प्रोटोकोल के अनुसार ही कैरेक्टर सैट अपनाएं और उनके जो साफ्टवेयर बाज़ार में प्रचलित हैं, उन्हें भी उसी के अनुसार बदलें । फिर भी बैंक यह तो तय कर ही सकते हैं कि भविष्य में वे वर्ड प्रोसेसिंग या डाटा प्रोसेसिंग का जो सॉफ्टवेयर बनवाएंगे या अपनाएंगे, उसमें अनकूलन क्षमता शुरू से ही देने के लिए सॉफ्टवेयर निर्माता कहेंगे।

कुंजीपटल की एकरूपता का प्रश्न

यहां कुछ शब्द कुंजीपटल की एकरूपता के बारे में भी कहना उचित रहेगा। देवनागरी मैन्युअल टाइपराइटरों में भी एकरूपता नहीं थी। दो कुंजीपटल (रेमिंग्टन और गोदरेज) तो काफी प्रचलित रहें हैं। देवनागरी वर्णों के लिए, इनकी कुंजियां अलग-अलग स्थानों पर थीं। जब कंप्यूटर के लिए देवनागरी फॉण्ट बनाए गए तो अनेक की बोर्डों का विकल्प यह सोचकर दे दिया गया कि हिंदी में टाइपराइटर पर काम करने वाले टाइपिस्ट और आशुलिपिक अपनी सुविधानुसार कुंजीपटल चुन सकें। तब यह नहीं सोचा गया कि अनेक कुंजीपटलों का प्रयोग आगे चलकर कंप्यूटर पर देवनागरी के प्रयोग में अनेक कठिनाइयां पैदा करेगा। वास्तविकता तो यह है कि देवनागरी में जो अधिक प्रचलित सॉफ्टवेयर हैं, वे डॉस विन्डोज और माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस की सुविधाओं का उपयोग करने के लिए ही हैं। लीप ऑफिस एम. एस. ऑफिस का स्थानापन्न कहा जा सकता है। अत: निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि देवनागरी के लिए कैरेक्टर सेट का मानक प्रोटोकोल निर्धारित किया जाए और उसी के अनुसार सॉफ्टवेयर विकसित करवाए जाएं।

महा प्रबंधक, बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग, भारतीय रिज़र्व बेंक, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई-400005

पृथ्वी की उत्पत्ति कैसे हुई ?

—डॉ. विजय कुमार उपाध्याय

पृथ्वी की उत्पत्ति को समझने कि लिए हमें सौर परिवार की उत्पत्ति की प्रक्रिया को पूरी तरह समझना होगा, क्योंकि हमारी पृथ्वी सौर परिवार का एक सदस्य है। अत: सौर परिवार की उत्पत्ति एवं पृथ्वी की उत्पत्ति के बीच काफी घनिष्ठ संबंध है। पृथ्वी की उत्पत्ति के संबंध में संसार के अनेक वैज्ञानिकों ने समय-समय पर अपने-अपने मत व्यक्त किए हैं।

सन् 1755 ई० में जर्मनी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक इमैनुएल कांट की एक पुस्तक प्रकाशित हुई जिसका नाम था "थियोरी ऑफ हेवेन्स" जिसमें उसने पृथ्वी की उतपत्ति के संबंध में एक परिकल्पना प्रस्तुत की थी। इस परिकल्पना के अनुसार प्रारम्भ में ब्रह्माण्ड के एक भाग में गैस तथा धूल कणों से निर्मित विशाल आकार का एक बादल मौजूद था। शुरु-शुरु में यह बादल बहुत ठंडा था तथा चाक की भांति अनवरत घूम रहा था। इमैनुएल कांट द्वारा प्रतिपादित इस परिकल्पना से आधुनिक काल के खगोलविद् भी सहमत हैं। आधुनिक तथा शक्तिशाली दूरबीनों द्वारा हाल ही में किए गए कुछ अध्ययनों पता चला है कि ब्रह्माण्ड में गैस तथा धूल से निर्मित एवं चक्के की भांति धूमते हुए विशाल बादल सचमुच ही मौजूद हैं।

सन् 1796 ई० फ्रांसीसी गणितज्ञ पियरे साइमन लैप्लेस ने कांट की परिकल्पना में थोड़ा संशोधन किया। उसने बताया कि ब्रह्माण्ड में स्थित गैस तथा धूल के कणों से निर्मित बादल ब्रह्माण्डीय बल (कॉस्मिक फोर्स) के कारण धीरे-धीरे चक्के की भांति घूमने लगे। साथ ही साथ यह बादल की अपने कणों के आपसी गुरुत्वाकर्षण बल के कारण धीरे-धीरे संकुचित होने लगा। इस संकुचन के दौरान समय-समय पर इस विशाल बादल के अंश छिटक कर बाहर निकल जाते थे। ये छिटके हुए अंश ग्रहों के रूप में बदल कर उस विशाल बादल के चक्करकाटने लगते थे । इन्हीं ग्रहों में एक है हमारी पृथ्वी। छिटके हुए टुकड़ों से विभिन्न ग्रहों के निर्माण के बाद जो केंद्रीय भाग बच गया, वही सूरज के रूप में परिवर्त्तित हो गया। परन्तु लैप्लेस की यह परिकल्पना आधुनिक खगोल विज्ञान की कसौटी पर खरी नहीं उतरती। आधुनिक खगोल विज्ञान के अनुसार गैस तथा धूल का घूमता तथा संकुचित होता हुआ बादल धीरे-धीरे अधिक तेजी से घूमना प्रारंभ करता जाएगा। इस प्रकार आज इसके घूमने की गति सूरज की वर्तमान गति से काफी अधिक होनी चाहिए थी।

लैप्लेस की परिकल्पना में कुछ त्रुटियों के पता चलने के बाद कई अन्य वैज्ञानिकों ने पृथ्वी तथा सौर परिवार के अन्य ग्रहों की उत्पत्ति संबंधी अपने अपने विचार नए ढंग से प्रस्तुत किए। सन् 1900 में टी० टी० चैम्बरलिन तथा एफ० आर० मौल्टन ने बताया कि सूर्य के इर्द-गिर्द घूमने वाले छोटे-मोटे टुकड़ों के आपस में सट कर मिलने से पृथ्वी एवं अन्य ग्रह बने। परन्तु प्रश्न यह उठता है कि छोटे-छोटे टुकड़े आए कहां से ? यदि ये टुकड़े सौर परिवार के बाहर से आये तो उन सबों की सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने की दिशा एक नहीं हो सकती। चैम्बरलिन तथा मोल्टन ने इस प्रश्न के उत्तर में बताया कि एक दूसरा तारा सूर्य के बगल से गुजरा जिसके गुरुत्व बल के कारण सूर्य का कुछ अंश टूट कर अलग हो गया जो कुछ ही समय के बाद ठंडा होकर छोटे-छोटे टुकड़ों के रूप में जम गया। ये टुकड़े सूर्य के चारों ओर उसी दिशा में चक्कर काटने लगे जिस दिशा में सूर्य की बगल से दूसरा तारा गया था। छोटे-छोटे टुकड़े धीरे-धीरे समूहों में जमा होने लगे। समूह में जुटे इस तरह के दो या तीन टुकड़े जब बहुत निकट आते थे तो उनका सामूहिक गुरुत्व बल अन्य टुकड़ों को आकर्षित कर लेता था। इस प्रकार टुकड़ों के क्रमिक योग से ग्रहों का निर्माण हुआ। कुछ ऐसे ग्रहों का आकार इस कारण बड़ा हुआ कि उन्होंने बहुत बड़े क्षेत्र से पदार्थों को अपने में समेट लिया। चूंकि सूर्य से 35-40 खगोली इकाइयों(एक खगोलीय इकाई-पृथ्वी की सूर्य से औसत दूरी जो लगभग 15 लाख किलोमीटर है) से ज्यादा दूरी पर टुकड़े नहीं के बराबर थे, अत: इस दूरी के बाद ग्रह नहीं बने। परन्तु आधुनिक वैज्ञानिकों के मतानुसार यदि सूर्य जैसे गर्म पिण्ड से किसी अन्य तारे के आकर्षण बल के कारण कुछ पदार्थ खींच कर अलग हो जाता है तो वह

अन्तर्तारक्षीय अंतरिक्ष में बिखर जाएगा, न कि घनीभूत होकर ग्रहों के रूप में परिवर्तित होगा। यदि मान भी लिया जाए कि सूर्य से पृथक होने वाला पदार्थ किसी अज्ञात विधि द्वारा संकुचित एवं घनीभूत होकर ग्रहों के रूप में परिवर्तित होता भी है तो सूर्य के चारों ओर इनके परिक्रमा पथ बहुत अधिक अनियमित एवं अव्यवस्थित होंगे न कि सौर परिवार के सदस्यों के परिक्रमा पथों के समान पूर्ण रूप से नियमित एवं व्यवस्थित होंगे।

पृथ्वी की उत्पत्ति संबंधी एक अन्य सिद्धान्त में बताया गया है कि प्रारम्भ में सूर्य का एक सहचर तारा था। यह सहचर तारा सूर्य से कुछ दूरी पर स्थित था। दूर से आता हुआ एक अन्य तारा सूर्य के सहचर तारे के साथ टकरा गया जिसके कारण सहचर तारा चूर-चूर हो गया तथा इसका मलवा कई ग्रहों के रूप में संगठित होकर सूर्य का चक्कर लगाने लगा। परन्तु इस परिकल्पना में भी एक त्रुटि मालूम पड़ती है। ब्रह्माण्ड में तारे एक दूसरे से इतने दूर-दूर स्थित हैं कि उपर्युक्त किस्म के टकराव की संभावना नगण्य है। यदि थोड़ी देर के लिए मान भी लिया जाए कि उपर्युक्त किस्म का टकराव हुआ तो फिर यह असंभव मालूम पड़ता है कि सहचर तारे के टूटने से उत्पन्न अति तप्त एवं उड़नशील पदार्थ विभिन्न ग्रहों के रूप में संगठित हो पायेगा। इस परिकल्पना में एक त्रुटि और भी है। इस परिकल्पना से इस बात की व्याख्या नहीं हो पाती कि विभिन्न ग्रहों के उपग्रहों का निर्माण कैसे हुआ।

रूसी वैज्ञानिक औटो स्मिट ने सन् 1944 ई. में उल्का संबंधी परिकल्पना प्रस्तुत की। इसी वर्ष सी.एफ. वॉन विजसैकर तथा सन् 1951 में जी.पी. कूपर ने भी स्मिट से मिलती जुलती ग्रहाणु परिकल्पना में प्रस्तुत कीं। उल्का या ग्रहाणु (प्लैनेटेसिमल) परिकल्पना के अनुसार यह माना गया कि सूर्य एवं ग्रहों का निर्माण विभिन्न स्रोतों से प्राप्त पदार्थों से हुआ। सूर्य के विकास के क्रम में एक ऐसा समय आया कि इसके गुरुत्व क्षेत्र में उपस्थित नीहारिका से गैस एवं धूल के ठंडे बादल के कुछ ग्रहाणु आकर्षित होकर चले गए जो सूर्य के शक्तिशाली गुरुत्व क्षेत्र में पुनर्गठित होने लगे। इस क्रम में बहुत से कण तो सूर्य में समाविष्ट हो गये तथा कुछ कण आपस में जुट कर बड़े टुकड़ों का निर्माण करने लगे। इन बड़े टुकड़ों के गुरुत्व क्षेत्र में छोटे कण खिंच कर आने लगे। इस प्रकार क्रमशः ग्रहों एवं उनके उपग्रहों का निर्माण हुआ। उल्का एवं ग्रहाणु परिकल्पना ग्रहों के आकार, कक्षा एवं घूर्णन संबंधी सभी गुणों की संतोषप्रद व्याख्या करने में सक्षम है। इतना ही नहीं इस परिकल्पना द्वारा ग्रहों एवं उपग्रहों के वास्तविक स्थान, द्रव्यमान, घनत्व एवं उनके सूर्य से संबंधित कोणीय आवेग की भी व्याख्या हो सकती है। परन्तु इस परिकल्पना द्वारा ग्रहों के अन्दर की समकेन्द्रीय परतों के निर्माण की व्याख्या नहीं हो पाती।

आधुनिक वैज्ञानिक एक बार पुनः कांट तथा लैप्लेस द्वारा प्रस्तुत परिकल्पना का समर्थन करने लगे हैं। परन्तु इस परिकल्पना का समर्थन उन्होंने कुछ संशोधनों के साथ किया है। इस परिकल्पना को नीहारिका परिकल्पना (नेबुलर हाइपोथेसिस) अथवा आदिग्रह परिकल्पना (प्रोटो प्लैनेट हाइपोथेसिस) कहा जाता है। 'प्रोटोप्लैनेट' परिकल्पना में यह मान लिया गया है कि जहाँ आज हमारा सौर परिवार स्थित है, वहाँ पहले एक विशाल बादल फैला हुआ था। यह विशाल बादल ब्रह्माण्ड मिश्रण से निर्मित था। इस ब्रह्माण्ड मिश्रण के एक हजार अणुओं में से 900 अणु हाइड्रोजन के, 97 हीलियम के तथा शेष तीन अणुओं में से कुछ भारी तत्व मौजूद थे। इन भारी तत्वों में शामिल थे—कार्बन, ऑक्सिजन, लोहा तथा कुछ अन्य तत्व। ब्रह्माण्ड मिश्रण से निर्मित यह बादल इतना विरल था कि उसका घनत्व सिर्फ 10^{-22} ग्राम प्रति घन सेंटीमीटर था। धीरे-धीरे यह विशाल बादल घूमने लगा। घूर्णन का विकास सामान्य ढंग से नहीं हुआ। हाल में खगोलविदों द्वारा रेडियो दूरबीनों की सहायता से उपर्युक्त किस्म के बादलों के बारे में किये गए अध्ययनों से पता चला है कि ऐसे बादल में सर्वप्रथम विक्षोभ (टर्बुलेंस) पैदा हुआ होगा। इस विक्षोभ के कारण बादल में सर्वप्रथम छोटे-छोटे भंवर उत्पन्न हुए होंगे। ये भंवर एक दूसरे से मिल कर धीरे-धीरे अधिक से अधिक बड़े होते गए होंगे। अन्त में सम्पूर्ण बादल पिण्ड घूमने लगा होगा। इस बादल के केन्द्र में एक काफी बड़ा भंवर बन गया होगा जिसने बादल के अन्य भागों की अपेक्षा तेजी से संकुचित होकर अन्त में आदि सूर्य (प्रोटोसन) का रूप लिया होगा।

उपर्युक्त आदि सूर्य (प्रोटो सन) के चारों ओर स्थित बादल की ठंडी गहराइयों में कुछ तत्व आपस में संयुक्त होकर चंद यौगिकों (जैसे जल, अमोनिया, इत्यादि) का निर्माण किया होगा। इसी प्रकार धीरे-धीरे ठोस खों (उदाहरणार्थ लौह सिलिकेट, तथा पाषाणी सिलिकेट) का निर्माण प्रारम्भ हुआ होगा । फिर धीरे-धीरे इस घूमते बादल में कार्यशील गुरुत्वाकर्षण तथा केंद्रपसारी बलों के कारण यह बादल एक विशाल तश्तरी की आकृति में परिवर्त्तित हो गया। इस विशाल घूमती तश्तरी में स्थानीय भंवरों का निर्माण हुआ होगा। इनमें

से कुछ भंवर आपस में टकराकर टूट गए होंगे। एक अर्थ में प्रत्येक भंवर अपने अस्तित्व के लिये कठिन संघर्ष कर रहा था। ऐसे विनाशकारी बलों की उपस्थिति में किसी भी भंवर को अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए यह आवश्यक था कि वह अपने दायरे में पदार्थों की एक निश्चित अल्पतम मात्रा को समेट ले जिससे कि उसका अपना एक गुरुत्वाकर्षण केंद्र बन जाए। इस प्रकार अस्तित्व के लिये संघर्ष के दौरान कुछ भंवर अपना पदार्थ खोते चले गए जबकि कुछ भंवर अपने दायरे में पदार्थों को समेटते चले गए। अन्त में आदि सूर्य के चारों ओर कुछ भंवर घूमती हुई छोटी-छोटी तश्तरियों के रूप में बदल गए। ये तश्तरियाँ विभिन्न ग्रहों के आदि रूप (प्रोटो टाइप) थीं। ये आदि ग्रह इतने बड़े थे जो अपने गुरुत्व बल के कारण अपने आप में बंधे रह सकते थे। इस प्रकार के आदि ग्रहों में से प्रत्येक ने सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने के क्रम में मूल बादल के छोटे छोटे टुकड़ों को अपने गुरुत्वाकर्षण बल के कारण समेटन शुरु किया। इस प्रकार आदि ग्रहों का आकार धीरे-धीरे बढ़ता गया।

आदि सूर्य के बाहर निर्मित विभिन्न आदि ग्रहों में एक थी हमारी पृथ्वी जो बर्फीले कणों तथा ठोस टुकड़ों के घूमते हुए बादल के रूप में उत्पन्न हुई थी। धीरे-धीरे इस बादल के कण एक बड़े ठोस गोले के रूप में संगठित हो गए। संगठित होने में योगदान दिया जल तथा बर्फ कणों के चिपकानी आकर्षण (कोहेसिव अट्रैक्शन) बल ने। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमने के दौरान अपने आकर्षण बल से सूर्य के चारों ओर बिखरे हुए धूल कणों को समेटती गई तथा इस प्रकार अपना आकार बढ़ाती गई।

धूल कणों के संगठित होने से निर्मित पृथ्वी रूपी गोले में कुछ रेडियोधर्मी तत्वों के कण भी शामिल थे जिनसे ताप का उत्सर्जन होने लगा। लाखों वर्षों तक पृथ्वी के भीतर इस प्रकार उत्पन्न ताप के संचय से पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ता गया। अन्त में तापमान इतना ऊँचा हो गया कि इसमें उपस्थित पदार्थ ठोस से द्रव में बदल गया। रूसी वैज्ञानिक ल्यूबीमोवा ने सन् 1969 ई. में पृथ्वी के आन्तरिक भाग के तप्तीकरण की गणना की। इसके अनुसार पृथ्वी के आन्तरिक भाग में कई सौ किलोमीटर गहराई का तापमान एक समय पर लोहे की द्रवणांक तक पहुंच गया। इस अवस्था में पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल के कारण इसमें उपस्थित विभिन्न पदार्थ अपने घनत्व के अनुसार पृथ्वी के भीतर विभिन्न परतों में जमा होने लगे। लोहा तथा निकेल जैसे भारी तत्व नीचे की ओर उतर कर केंद्रीय भाग में जमा होने लगे जिससे क्रोड का निर्माण हुआ। कुछ हल्के तत्व तथा उनके यौगिक क्रोड के बाहर वाली परत में जमा हुए जिससे प्रावर (मैंटल) का निर्माण हुआ। सबसे हल्के तत्व तथा उनके यौगिक पृथ्वी की सबसे बाहरी परत में जमा हो गए जिससे भूपटल का निर्माण हुआ।

धीरे-धीरे पृथ्वी अपने ताप का विकिरण करने लगी जिसके कारण यह ठंडी होने लगी। अधिक तापमान गिरने के कारण यह द्रव से ठोस में परिवर्त्तित होने लगी। सर्वप्रथम इसकी सबसे बाहरी परत अर्थात् भूपटल का द्रव से ठोस में परिवर्त्तन हुआ। इसके उपरान्त भीतरी परतें भी धीरे-धीरे ठोस बनने लगीं। पृथ्वी के भीतरी भाग का कुछ अंश अभी भी द्रव अवस्था में है।

प्राध्यापक, भूगर्भ इंजीनियरिंग कालेज, भागलपुर-813210

राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी गतिविधियां

हिंदी कार्यशालाएं

इंडियन बैंक, मंडल कार्यालय, अहमदाबाद

गुजरात एवं राजस्थान मंडल की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में बैंक अधिकारियों के लिए 2 दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन 21-12-2002 को किया गया। कार्यशाला का उद्घाटन सहायक महाप्रबंधक एवं मंडल प्रधान श्री ए.टी.एम. जोसफ ने किया। कार्यशाला में 27 प्रतिभागियों ने भाग लिया। प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए श्री जोसफ ने कहा कि उन्हें उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, दिल्ली, पंजाब में कार्य करने का अवसर मिला, जिसके फलस्वरूप वे आज अच्छी हिंदी बोल सकते हैं और लिख सकते हैं। उन्होंने कहा कि प्रतिभागियों को कार्यशाला से अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहिए और हिंदी में काम करते हुए गर्व महसूस करना चाहिए। मुख्य शाखा के मुख्य प्रबंधक श्री प्रवीन पटेल ने अपने स्वागत भाषण में हिंदी और बहुभाषीय साफ्टवेयरों की उपयोगिता पर चर्चा करते हुए प्रतिभागियों को इनकी आधुनिकता संबंधी विशेष जानकारी दी। प्रतिभागियों को हिंदी पत्राचार और ग्राहक सेवा में हिंदी भाषा की भूमिका पर जानकारी दी गई। मुख्य प्रबंधक श्री एस. शेषाद्रि की उपस्थिति में कार्यशाला का समापन समारोह संपन्न हुआ।

विजया बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, मंगलूर

21 से 26 नवम्बर, 2002 तक बैंक अधिकारियों के लिए द्वि दिवसीय उच्च स्तरीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें कुल 19 अधिकारियों ने भाग लिया। उद्घाटन उप महाप्रबंधक श्री सुरेन्द्र एम. भण्डारी ने किया। अपने उद्घाटन भाषण में उन्होंने कहा कि बैंकिंग क्षेत्र में जनता तक पहुंचने के लिए हिंदी अपनाना एक उचित उपाय है। कार्यशाला में लघु परीक्षा ली गई। विजेताओं को नगद पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पत्राचार, अनुवाद और अभ्यास संबंधी सत्र प्रतिभागियों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए।

आन्ध्रा बैंक, आंचलिक कार्यालय, काकिनाडा

30 अक्तूबर, 2002 को सामान्य बैंकिंग विषय पर एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें कार्यशाला का विषय ग्राहक सेवा और पेंशन रखा गया। इस कार्यशाला के लिए अंचल की सभी शाखाओं के कर्मचारियों को नामित किया गया। सहायक महाप्रबंधक श्री बी.एन. मूर्ति ने कार्यशाला का उद्घाटन किया। उन्होंने अपने वक्तव्य में शाखा स्तर पर ग्राहक सेवा में सुधार लाने पर जोर दिया और सभी प्रतिभागियों से कहा कि वे ग्राहकों को तुरन्त सेवा प्रदान करें। मुख्य प्रबंधक श्री वी.बी. भवगती ने सभी प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए कहा कि वे नये खाते अधिक से अधिक खोलने और जमा संग्रह पर ध्यान देने के साथ-साथ बैंक की योजनाओं की मार्किटिंग पर अधिक बल दें। कार्यशाला में ग्राहक सेवा शाखा स्तर पर आने वाली विभिन्न प्रकार की शिकायतों और उनके समाधान तथा पेंशन संबंधी विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया।

भारतीय औद्योगिक विकास बैंक, शेक्सपीयर सरणी, कोलकाता

10-12 दिसम्बर, 2002 के दौरान 5 सत्रीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसके दौरान स्टाफ सदस्यों को हिंदी में कार्य करने का व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान किया गया। उद्घाटन उप महाप्रबंधक श्री एस. सी. दास ने किया। उन्होंने प्रतिभागियों से अनुरोध किया कि वे इस कार्यशाला का भरपूर लाभ उठाएं ताकि उनका हिंदी ज्ञान और समृद्ध हो और वे अपने डैस्क का काम हिंदी में और अच्छे ढंग से कर सकें। प्रतिभागियों को भारत सरकार की राजभाषा नीति और उसके अनुपालन, शुद्ध हिंदी कैसे लिखें, हिंदी पत्राचार, टिप्पण, आलेखन और पारिभाषिक शब्दावली आदि विषयों पर जानकारी दी गई।

आकाशवाणी, कडप्पा (आं. प्र.)

26 और 27 नवम्बर, 2002 को 2 दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में प्रतिभागियों को हिंदी के प्रयोग की लोकप्रियता, हिंदी व्याकरण, हिंदी के प्रयोजन में आने वाली टिप्पणियों और हिंदी पत्राचार की जानकारी दी गई और अभ्यास कराया गया।

राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, सैक्टर-18 गुड़गांव

27 दिसंबर, 2002 को बोर्ड मुख्यालय में हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें 23 अधिकारियों ने भाग लिया। उद्घाटन वरिष्ठ उप निदेशक एवं अध्यक्ष

राजभाषा कार्यान्वयन समिति श्री पी. के. सिंह ने किया। राजभाषा कार्यान्वयन कार्यालय, दिल्ली के उप निदेशक श्री प्रेम सिंह ने प्रतिभागियों को सरकार की राजभाषा नीति, राजभाषा अधिनियम, 1963, राजभाषा नियम, 1976 राजभाषा संकल्प 1968, वार्षिक कार्यक्रम पर विस्तार पूर्वक जानकारी दी।

महालेखाकार (लेखा व हकदारी) का कार्यालय, ओडिशा, भुवनेश्वर

16-12-2002 से दिनांक 20-12-2002 तक 5 दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें कार्यालय महालेखाकार (लेखा व हकदारी) का कार्यालय, ओडिशा, भुवनेश्वर कार्यालय के अधिकारियों और कर्मचारियों ने भाग लिया। उद्घाटन करते हुए उपमहालेखाकार (प्रशा.) श्री अनन्त किशोर बेहेरा ने प्रतिभागियों को कार्यशाला में भाग लेकर इसका लाभ उठाने की सलाह दी। कार्यशाला में प्रतिभागियों को सरकार की राजभाषा नीति, अनुवाद तथा कार्यालय में हो रहे कार्य संबंधी टिप्पण और प्रारूप लेखन पर प्रशिक्षण दिया गया। कार्यशाला के समापन पर महालेखाकार श्रीमती अनीता पट्टनायक ने प्रतिभागियों के साथ उनकी अनुभूति पर चर्चा की और कार्यशाला में प्राप्त प्रशिक्षण ज्ञान को अधिक से अधिक कार्य में प्रयोग करने के लिए आग्रह किया। उन्होंने प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र वितरित किए।

नेशनल हाइड्रोइलैक्ट्रिक पावर कारपोरेशन लिमिटेड, बनीखेत, जिला चम्बा (हि.प्र.)

21 दिसम्बर, 2002 को एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें क्षेत्र-2 कार्यालय में कार्यरत पर्यवेक्षक स्तर के 14 प्रतिभागियों ने भाग लिया। कार्यशाला का उद्घाटन श्री आर.पी. सिंह ने किया। उन्होंने कहा कि हमें अपने दैनिक कार्यों का हिंदी का प्रयोग अधिक से अधिक करना चाहिए और छोटी-छोटी टिप्पणियां, पत्र एवं नोट आदि हिंदी में ही लिखने चाहिए। प्रबंधक (पर्यावरण) डा. त्रिपाठी ने कहा कि हमें ऐसी कार्यशालाओं का भरपूर लाभ उठाना चाहिए और व्यावहारिक कार्य में आने वाली कठिनाइयों को दूर करना चाहिए।

भारी पानी संयंत्र तालचेर, उड़ीसा

28 और 29 नवम्बर, 2002 को संयंत्र में 2 दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें संयंत्र के विभिन्न अनुभागों के कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यशाला का उद्घाटन मुख्य अतिथि तथा संयंत्र के महाप्रबंधक श्री आर. के. दास ने किया। श्री दास ने कार्यशालाओं के प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र वितरित किए।

केंद्रीय रेशम बोर्ड, क्षेत्रीय तसर अनुसंधान केंद्र, मंत्रीपुखरी : मणिपुर

20-12-2002 को केंद्र में एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसके कार्यक्रम की अध्यक्षता उप निदेशक डा. के. इबोहल सिंह ने की। कार्यशाला में प्रतिभागियों को 'हिंदी उच्चारण में हिंदी वर्तनी का सुधार' विषय पर अभ्यास कराया गया और जानकारी दी गई।

हिंदी दिवस, पखवाड़ा, मास का आयोजन

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, संघ शासित प्रदेश दादरा एवं नगर हवेली प्रशासन द्वारा 29 अगस्त से 12 सितम्बर, 2002 तक संयुक्त हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। पखवाड़े के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की हिंदी प्रतियोगिताएं जैसे हिंदी निबंध, हिंदी वाक् प्रतियोगिता, हिंदी एकांकी नाटक, हिंदी टिप्पण एवं प्रारूप लेखन, हिंदी टंकण प्रतियोगिताएं आदि आयोजित की गई। दिनांक 13 सितम्बर, 2002 को दमन व दीव एवं दादरा नगर हवेली के प्रशासक श्री ओम प्रकाश केलकर ने प्रतिभागियों को 116 पुरस्कार प्रदान किए।

इसके अलावा अन्य जिन कार्यालयों में हिंदी दिवस, हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़ा आदि मनाए गए उनका विवरण इस प्रकार है :—

नेशनल एल्यूमिनियम कंपनी लिमिटेड, भुवनेश्वर

प्रसार भारती, आकाशवाणी, जोधपुर

प्रसार भारती, आकाशवाणी, नागपुर

प्रसार भारती, आकाशवाणी, कोत्तूगडेम

प्रसार भारती, आकाशवाणी, रत्नागिरी

प्रसार भारती, दूरदर्शन केंद्र, हैदराबाद

केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग, इलाहाबाद

भारत संचार निगम लिमिटेड, बरेली

भारतीय औद्योगिक विकास बैंक, भुवनेश्वर

पंजाब नेशनल बैंक, चण्डीगढ़,

भारतीय डाक विभाग, उ.प्र. परिमण्डल, अलीगंज, लखनऊ।

भारत संचार निगम लिमिटेड, चेन्नै

नव मंगलूर पत्तन न्यास, मंगलूर

आकाशवाणी, इन्दौर

गैस टरबाइन अनुसंधान स्थापन, रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन, बेंगलूर

रसायन और उर्वरक मंत्रालय, नई दिल्ली

कर्मचारी राज्य बीमा निगम, कानपुर

कर्मचारी राज्य बीमा निगम, नई दिल्ली

कर्मचारी राज्य बीमा निगम, हैदराबाद

कर्मचारी राज्य बीमा निगम, नागपुर

कर्मचारी राज्य बीमा निगम, जयपुर

राष्ट्रीय विषाणु विज्ञान संस्थान, पुणे

भारत सरकार पाठ्य पुस्तक मुद्रणालय, चण्डीगढ़

सीमा शुल्क एवं केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्तालय पणजी गोवा

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, कोषिक्कोड

प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।

केन्द्रीय इलैक्ट्रानिकी अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान, पिलानी (राजस्थान)

जल संसाधन मंत्रालय, नई दिल्ली

केंद्रीय यांत्रिक अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुर

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून

कृषि मंत्रालय, कृषि और सहकारिता विभाग, नागपुर

राजभाषा पुरस्कार वितरण समारोह

16 सितम्बर से 30 सितम्बर तक हिंदी दिवस/पखवाड़ा के दौरान सीमा सड़क महानिदेशालय, नई दिल्ली में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में जिन अधिकारियों और कर्मचारियों को विजयी घोषित किया गया उन्हें नगर पुरस्कार और प्रमाण-पत्र से सम्मानित करने हेतु दिनांक 13 जनवरी, 2003 को महानिदेशालय में पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में सीमा सड़क विकास मण्डल तथा सीमा सड़क महानिदेशालय के उच्च अधिकारियों ने भाग लिया। महानिदेशक ले. जनरल प्रकाश सूरी ने प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए कहा कि सरकारी कामकाज में राजभाषा के प्रयोग को बढ़ाने के लिए सभी अधिकारियों और कर्मचारियों को स्वतः मन लगाकर काम करना चाहिए। उन्होंने कहा कि निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि सरल और बोलचाल के शब्दों का उपयोग किया जाए। मूल रूप से हिंदी में काम करने के लिए प्रोत्साहन योजना के तहत 10 कर्मचारियों को नगर पुरस्कार तथा प्रमाण-पत्र प्रदान किए गए।

कंप्यूटर पर हिंदी में तकनीकी संगोष्ठी

सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के सम्बद्ध कार्यालय संगणक केंद्र में दिनांक 29 अक्तूबर, 2002 को निम्नलिखित विषयों पर एक तकनीकी संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिनमें लगभग 60 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया :—

1. कंप्यूटर और हिंदी के नए-नए आयाम
2. भारत सरकार की राजभाषा नीति और यांत्रिक इलैक्ट्रानिक उपकरण।

संगोष्ठी की अध्यक्षता संगणक केन्द्र के उप महानिदेशक एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री विष्णु कुमार ने की। संगोष्ठी का संचालन केन्द्र के सहायक निदेशक श्री देवी दत्त तिवारी ने किया।

प्रसिद्ध भाषाविद् तथा वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के पूर्व अध्यक्ष प्रो. सूरजभान सिंह ने कंप्यूटर और भाषा में घनिष्ठ संबंध बताते हुए कहा कि जो व्यक्ति कंप्यूटर पर कार्य करता है, कंप्यूटर उसका अभिन्न अंग बन जाता है। उसके बिना उसका कार्य नहीं चल सकता। उन्होंने कहा कि आज कंप्यूटर जनसाधारण की पहुंच से बाहर नहीं है। इसमें अनेक विशेषताएं हैं और आम आदमी इसको उपयोग में ला रहा है। कंप्यूटर वैश्वीकरण का अंग भी है और साधक भी।

कंप्यूटर से हमें सूचनात्मक तथा ज्ञानात्मक सामग्री उपलब्ध होती है। इस प्रकार कंप्यूटर हमारे सामाजिक, वाणिज्यिक और शैक्षणिक आदि जरूरतों को पूरा करने वाले एक बहुपरियोजनीय, महत्वपूर्ण तथा अपरिहार्य उपकरण बन गया है।

प्रो. सिंह ने कहा कि कंप्यूटर एक ऐसा उपकरण है जिसमें कार्य करने के लिए शब्दों, उनके स्वरूप, उनके अर्थों में अन्तर नहीं होना चाहिए। हिंदी भाषा इस संदर्भ में अवस्थित भाषा है। इसमें एक ही शब्द को भिन्न-भिन्न प्रकार से लिखा जा सकता है। कंप्यूटर की भाषा अपनाने के लिए इसमें सुधार की आवश्यकता है एवं किसी भी भाषा का विकास उसके अधिक से अधिक प्रयोग पर नीहित है।

प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए संगणक केन्द्र के उप महानिदेशक ने केन्द्र में राजभाषा हिंदी के प्रयोग तथा वेबसाइट पर हिंदी में किए जा रहे कार्यों का उल्लेख करते हुए बताया कि केंद्र में तकनीकी प्रकृति का कार्य होने से भी काफी कार्य हिंदी में हो रहा है। राजभाषा विभाग के उप निदेशक श्री नेत्रसिंह रावत ने प्रतिभागियों को सरकार की राजभाषा नीति, राजभाषा नियम और राजभाषा अधिनियम की जानकारी दी।

बैंक आफ महाराष्ट्र द्वारा बैंकों के कार्यपालकों हेतु संगोष्ठी

बैंक आफ महाराष्ट्र द्वारा दिनांक 24 सितम्बर, 2002 को बैंकों के कार्यपालकों हेतु बैंकिंग विषयों पर हिंदी में एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें विभिन्न सरकारी क्षेत्र के बैंक/वित्तीय संस्थाओं के वरिष्ठ कार्यपालकों ने भाग लिया।

संगोष्ठी का उद्घाटन बैंक ऑफ महाराष्ट्र के कार्यपालक निदेशक श्री अरूण कुमार एस.राव ने किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि 'आज का आनंद' के संपादक श्री श्याम अग्रवाल थे।

उद्घाटन सत्र में अध्यक्षीय भाषण में बोलते हुए बैंक ऑफ महाराष्ट्र के कार्यपालक निदेशक श्री अरूण कुमार एस.राव ने कहा कि राजभाषा के मात्रात्मक कार्य का लक्ष्य काफी हद तक पूरा हो चुका है और अब राजभाषा के कार्य में गुणात्मक सुधार लाने की आवश्यकता है, उन्होंने इस संगोष्ठी को इसकी संकल्पना का एक रूप बताया।

संगोष्ठी के चर्चासत्र में आलेखकार श्री योगेश्वरकुमार, महाप्रबंधक, आंध्रा बैंक ने 'वर्तमान आर्थिक परिदृष्य में आस्ति-देयता व जोखिम प्रबंधन' विषय पर अपना आलेख प्रस्तुत किया।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में हिंदी चेतना मास

परिषद में 14 सितम्बर से 13 अक्तूबर, 2002 तक हिंदी चेतना मास का आयोजन किया गया, जिसके दौरान हिंदी में टिप्पण, मसौदा लेखन, निबंध लेखन, वाद-विवाद प्रश्न मंच आदि विभिन्न प्रतियोगिताओं के अनुसार आयोजन किया गया। 12 नवम्बर, 2002 को समापन अवसर पर आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। वर्ष 2001-02 के दौरान हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने वाले भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के 6 अधीनस्थ संस्थानों यथा भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली; राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल; केंद्रीय उपोषण उद्यान संस्थान, लखनऊ; राष्ट्रीय सोयाबीन अनुसंधान संस्थान केन्द्र इन्दौर; केंद्रीय मात्स्यिकी प्रौद्योगिकी संस्थान, कोच्चि और राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रबंध अकादमी, हैदराबाद को परिषद के 'राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार' से पुरस्कृत किया गया।

वितरण समारोह में प्रो० रामदेव भण्डारह राज्यसभा सांसद तथा संसदीय राजभाषा समिति के सदस्य मुख्य अतिथि के रूप में पधारे। समारोह की अध्यक्षता परिषद के महानिदेशक डा० पंजाब सिंह ने की। प्रो० भण्डारी ने कहा कि शिक्षा से जुड़े इस प्रतिष्ठान में हिंदी को इतना सम्मन और गौरव प्राप्त हुआ है। इस उपलब्धि के लिए उन्होंने परिषद को बधाई दी। डा० पंजाब सिंह ने कहा कि हिंदी चेतना मास में इतनी बड़ी संख्या में अधिकारियों और कर्मचारियों ने भाग लिया। इसे देखकर यह आशा बंधती है कि भविष्य में भी इस प्रकार के आयोजनों में अधिकारी/कर्मचारी भाग लेते रहेंगे।

वड़ोदरा में राजभाषा सम्मेलन का आयोजन

वड़ोदरा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम) के (संयोजक: गुजरात रिफाइनरी) के तत्वावधान में 17-18 जनवरी, 2003 को 'भूमंडलीकरण एवं निजीकरण का हिंदी पर प्रभाव' विषय पर 2 दिवसीय राजभाषा सम्मेलन का

आयोजन किया गया, जिसमें उपक्रमों, बैंकों और केन्द्र सरकार के कार्यालयों के लगभग 300 राजभाषा अधिकारियों ने भाग लिया।

सम्मेलन का उद्घाटन गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री एम.एल. गुप्ता ने किया और अध्यक्षता समिति के अध्यक्ष और गुजरात रिफाइनरी के कार्यकारी निदेशक श्री बी.के. मुखर्जी ने की। इस अवसर पर उन्होंने रिफाइनरी के प्रशासन प्रबंधक तथा नराकास सदस्य सचिव डा. माणिक मृगेश के काव्य संग्रह 'तोल-तोल के बोल' का लोकार्पण किया।

रिफाइनरी के कार्यकारी निदेशक श्री बी. के. मुखर्जी ने हिंदी साहित्य अकादमी के अध्यक्ष (गुजरात) डा. अम्बाशंकर नागर, प्रख्यात हिंदी गुजराती विद्वान डा. रजनीकांत जोशी, गुजराती बोल, बडोदरा के संपादक श्री खगेश शाह जैसे हिंदी सेवियों को राजभाषा के प्रचार-प्रसार में अद्वितीय योगदान के लिए रिफाइनरी राजभाषा सम्मान से अभिनन्दित किया। इस अवसर पर रिफाइनरी द्वारा आयोजित अखिल भारतीय निबंध एवं कविता प्रतियोगिता के विजेताओं को भी पुरस्कृत किया गया।

सम्मेलन का समापन काव्य गोष्ठी से हुआ।

नई दिल्ली में क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन

21 मार्च 2003 को नई दिल्ली के विज्ञान भवन में मध्य, पश्चिम, दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम क्षेत्रों के लिए संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन एवं पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता गृह राज्य मंत्री श्री ईश्वर दयाल स्वामी जी ने की। उप प्रधान मंत्री श्री लाल कृष्ण आडवाणी इस समारोह के मुख्य अतिथि थे।

सम्मेलन में केंद्रीय सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों, राष्ट्रीय यकृत बैंकों और नगर राजभाषा कार्यान्वियन समितियों के वरिष्ठ अधिकारी और राजभाषा अधिकारी उपस्थित थे। इस अवसर पर प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए श्री आडवाणी ने कहा कि जब भारत में स्वतंत्रता आंदोलन चला था जो वह स्व भाषा में चला था। उन्होंने कहा कि स्व भाषा का अभिप्राय केवल हिंदी से नहीं है बल्कि भारत की सभी भाषाएं स्व भाषाएं हैं। हमें ऐसा नहीं मानना चाहिए कि स्व भाषा तब आगे बढ़ेगी जब अंग्रेजी का विरोध होगा। उन्होंने कहा कि हमें अंग्रेजियत का दास नहीं होना चाहिए बल्कि अपनी भाषा पर गर्व होना चाहिए। सूचना प्रौद्योगिक का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि आज भारत की गिनती दुनिया के अग्रणी देशों में की जाती है। अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान होते हुए भी हमें अपनी भाषा पर स्वाभिमान होना चाहिए। देश को आगे ले जाने के लिए यह आवश्यक है कि हमें स्वत्व पर गर्व हो।

श्री आडवाणी ने कहा कि देश तभी आगे बढ़ेगा जब हम अन्य भाषाओं को आत्मसात करते हुए अपनी भाषाओं पर गर्व करेंगे। उन्होंने हिंदी सिनेमा की सराहना करते हुए कहा कि हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदी सिनेमा का अद्वितीय योगदान रहा है। उन्होंने यह भी कहा कि हिंदी सिनेमा के सभी बड़े केन्द्र गैर हिंदी भाषी क्षेत्रों में अवस्थित हैं जैसे कोलकाता, मुंबई और चेन्नई।

इससे पूर्व श्री आडवाणी ने मध्य, पश्चिम, दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम क्षेत्रों के बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और नगर राजभाषा कार्यान्वय समितियों को राजभाषा हिंदी में उत्कृष्ट कार्य निष्पादन के लिए वर्ष 2000-01, 2001-02 के लिए राजभाषा पुरस्कारों से सम्मानित किया।

समारोह की अध्यक्षता करते हुए गृह राज्य मंत्री श्री आई.डी. स्वामी ने कहा कि भारत बहुभाषी देश है परन्तु इस देश की सभी भाषाओं की आत्मा एक है। उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में राजभाषा हिंदी में सराहनीय कार्य करने के लिए राजभाषा अधिकारियों की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि जिनको इस वर्ष पुरस्कार प्राप्त नहीं हुए वे पुरस्कार प्राप्त कर्ताओं से प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त कर आगे के लिए प्रयास रत रहेंगे। उन्होंने इस अवसर पर डा. ए.वि. गिरिजा कुमार की पुस्तक 'विद्यारम्भम' का लोकार्पण भी किया।

सचिव, राजभाषा विभाग श्री गोविन्द रा. पाटवर्धन ने संघ सरकार की राजभाषा नीति का उल्लेख करते हुए राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यान्वय कार्यालयों द्वारा किए जा रहे राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग का ब्यौरा प्रस्तुत करते हुए कहा कि क्षेत्रीय कार्यालय का सीधा सम्पर्क जनता से होता है। इसलिए वे राजभाषा हिंदी के कार्यान्वय में अहम और महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहे है।

इस अवसर पर गान्धर्व महाविद्यालय के कलाकारों ने विविध सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए।

संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग, श्री मदन लाल गुप्ता ने माननीय उप प्रधान मंत्री, गृह राज्य मंत्री, सचिव, राजभाषा विभाग, विभिन्न क्षेत्रों से आये हुए प्रतिभागियों और कार्यक्रम की व्यवस्था से जुड़े हुए विभिन्न अधिकारियों और कर्मचारियों का धन्यवाद किया।

गुवाहाटी में क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन

26-27 मार्च, 2003 को गुवाहाटी के रविन्द्र भवन में पूर्व तथा पूर्वोत्तर क्षेत्रों का संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन तथा पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। सम्मेलन की अध्यक्षता विभाग के संयुक्त सचिव श्री मदन लाल गुप्ता ने की। असम राज्य के महामहिम राज्यपाल लेफ्टिनेंट जनरल (सेवानिवृत) श्री एस. के. सिन्हा इस समारोह के मुख्य अतिथि थे।

अपने उद्घाटन भाषण में महामहिम राज्यपाल ने कहा कि सभी क्षेत्रीय भाषाएं राष्ट्रभाषाएं हैं, जबकि हिंदी मुख्य राष्ट्रभाषा है। उन्होंने कहा कि हिंदी एक ऐसी भाषा है, जिसे सभी जानते और बोलते हैं। उन्होंने कहा कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी के प्रचार पर बहुत अधिक बल दिया। उन्होंने हिंदी इतर भाषी क्षेत्रों में हिंदी पढ़ने के लिए विशेष अभियान चलाया। संस्कृत भाषा के महत्व का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि यह सभी भाषाओं की जननी है। उन्होंने कहा कि मध्यकालीन भारत में संस्कृत असम की राजभाषा थी और 19वीं शताब्दी तक यह राजभाषा बनी रही। महामहिम राज्यपाल ने कहा कि 1947 के बाद सेना में हिंदी का प्रयोग शुरू हुआ और आज इस क्षेत्र में हिंदी का सर्वाधिक प्रयोग हो रहा है।

अपने अध्यक्षीय भाषण में गृह मंत्रालय राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री मदन लाल गुप्ता ने कहा कि राजभाषा को सूचना प्रौद्योगिकी से जोड़ना नितांत आवश्यक है। राजभाषा का अधिक से अधिक प्रयोग बढ़ाने का विभाग प्रयास कर रहा है। वैज्ञानिकों को भी हिंदी में शोध पत्र पढ़ने के लिए प्रेरित किया जाता है। विभाग के प्रयास से केन्द्र सरकार के मंत्रालयों और विभागों में वेबसाइटें हिंदी और अंग्रेजी में उपलब्ध कराने का प्रयास हुआ है। उन्होने कहा कि कंप्यूटर पर हिंदी सीखने का पाठ्यक्रम शीघ्र ही इन्टरनेट पर उपलब्ध करा दिया जाएगा। श्री गुप्ता ने कहा कि कंप्यूटर के 46 प्रशिक्षण शिविर आयोजित किए गए हैं। इनकी संख्या अगली बार बढ़ाकर 100 की जा रही है। मशीनी अनुवाद के लिए भी मंत्रालय द्वारा प्रयास किए जा रहे हैं।

सम्मेलन के दूसरे दिन दिनांक 27 मार्च, 2003 को भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् डिब्रूगढ़ के निदेशक डा. जे. मोहन्ता 'स्वास्थ्य सेवाओं के उभरते आयाम' पर प्रकाश डालते हुए पूर्वोत्तर में कैंसर, डायबिटीज, मलेरिया, हाईपरटेंशन और हृदय रोग जैसी बीमारियों की स्थिति तथा उनसे बचाव के बारे में प्रतिभागियों को जानकारी दी। विभाग द्वारा सी डेक पुणे के माध्यम से विकसित कराए गए लीला हिंदी प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ तथा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद परियोजना के अन्तर्गत मंत्रा-राजभाषा साफ्टवेयरों की विस्तृत जानकारी भी प्रतिभागियों को दी गई।

इस अवसर पर विभाग ने केन्द्र सरकार के मंत्रालयों/विभागों/उपक्रमों/ राष्ट्रीयकृत बैंकों, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों और संस्थाओं आदि द्वारा हिंदी में प्रकाशित स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं की एक प्रदर्शनी भी लगाई जिसे महामहिम राज्यपाल के अलावा सम्मेलन में उपस्थित वरिष्ठ अधिकारियों और राजभाषा अधिकारियों ने देखा और इसमें दिलचस्पी दिखाई। सभी ने प्रदर्शनी की भूरि-भूरि प्रशंसा की। सम्मेलन में गीत एवं नाटक प्रभाग, गुवाहाटी के कलाकारों द्वारा ओड़ीसी नृत्य तथा अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए।

पूर्व तथा पूर्वोत्तर क्षेत्रों में अवस्थित सरकारी कार्यालयों, बैंकों, वित्तीय संस्थाओं, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को राजभाषा हिंदी में उत्कृष्ट कार्य-निष्पादन के लिए वर्ष 2000-01, 2001-02 के लिए राजभाषा पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।

आदेश-अनुदेश

गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, नई दिल्ली का दिनांक 11 दिसंबर, 2002 का कार्यालय ज्ञापन I/20017/07/2002-रा.भा. (नी. 1)

***विषय*: केंद्रीय हिंदी समिति की कार्य-संचालन उप समिति का गठन।**

प्रधानमंत्री जी की अध्यक्षता में गठित केंद्रीय हिंदी समिति की दिनांक 6-9-2002 को हुई 26वीं बैठक में लिए गए निर्णय के परिप्रेक्ष्य में केंद्रीय हिंदी समिति की एक कार्य संचालन उप-समिति गठित की गई है। इस समिति में निम्नलिखित सदस्य होंगे :—

(i) श्री विद्यानिवास मिश्र —अध्यक्ष

(ii) डॉ० ओ.पी. अग्रवाल —सदस्य

(iii) डॉ. पुरूषोत्तम लाल चतुर्वेदी —सदस्य

(iv) श्री मधुकर राव चौधरी —सदस्य

(v) सचिव, माध्यमिक और उच्चत्तर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय —सदस्य

(vi) सचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय —सदस्य-सचिव

2. कार्य संचालन उप-समिति केंद्रीय हिंदी समिति द्वारा पारित सभी प्रस्तावों/निर्णयों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करेगी।

3. यह उप-समिति आवश्यकतानुसार प्रति तिमाही बैठक करेगी तथा अपनी रिपोर्ट केंद्रीय हिंदी समिति की अगामी बैठक में प्रस्तुत करेगी। उप समिति का कार्यकाल 18 जून, 2003 तक होगा।

4. उप-समिति के गैर-सरकारी सदस्यों को बैठक में भाग लेने के लिए यात्रा भत्ता और दैनिक भत्ता देने के प्रयोजन से इस उप-समिति को उच्च स्तरीय समिति माना जाएगा।

5. कार्य संचालन उप-समिति का मुख्यालय नई दिल्ली में होगा।

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप-संस्थान (हिंदी टंकण एवं आशुलिपि गहन प्रशिक्षण केन्द्र) का दिनांक 13-12-12002 के पत्र सं. 2-1-2001-के.हि.प्र.उ. संस्थान में 3644 से 4044 तक

विषय—संघ सरकार के मंत्रालयों/विभागों तथा उनके नियंत्रणाधीन निगमों, सार्वजनिक क्षेत्रों, लोक उद्यमों, अभिकरणों आदि के कर्मचारियों के लिए दिनांक 10-1-2003 से 10-12-2003 तक चलाये जाने वाले हिंदी टाइपिंग एवं आशुलिपि के पूर्णकालिक गहन प्रशिक्षण पाठयक्रम

महोदय/महोदया

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, भारत सरकार के मंत्रालयों, विभागों, उपक्रमों, बैंकों तथा अन्य कार्यालयों के कर्मचारियों के लिए पाठयक्रमों के साथ-साथ हिंदी टाइपलेखन और हिंदी आशुलिपि के पूर्णकालिक गहण प्रशिक्षण पाठयक्रम भी चलाता है।

2. केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, कोलकाता द्वारा चलाये जाने वाले हिंदी टाइपलेखन एवं हिंदी आशुलिपि के पूर्णकालिक गहन प्रशिक्षण पाठयक्रम का वर्ष 2003 (कैलेण्डर वर्ष) का कार्यक्रम आपको आवश्यक कार्रवाई हेतु प्रेषित किया जा रहा है—

क्रम सं.	प्रशिक्षण कार्यक्रम	प्रशिक्षण की अवधि	प्रशिक्षण की तिथियां	प्रशिक्षण केंद्र का पता
1.	हिंदी टाइपलेखन	40 कार्यदिवस	10-1-2003 से 7-3-2003 तक	केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप संस्थान (हिंदी टंकण/आशुलिपि ग्रहण प्रशिक्षण केंद्र) राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, कमरा नं. 30, तीसरा तल 1, कौंसिल हाउस स्ट्रीट, कोलकाता- 700001
2.	हिंदी टाइपलेखन	40 कार्यदिवस	10-3-2003 से 9-5-2003 तक	
3.	हिंदी टाइपलेखन	40 कार्यदिवस	26-5-2003 से 18-7-2003 तक	
4.	हिंदी आशुलिपि	80 कार्यदिवस	18-8-2003 से 10-12-2003 तक	

क्रम सं.	प्रशिक्षण कार्यक्रम	प्रशिक्षण की अवधि	प्रशिक्षण की तिथियां	प्रशिक्षण केंद्र का पता
1.	हिंदी टाइपलेखन	40 कार्यदिवस	10-1-2003 से 7-3-2003 तक	केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप संस्थान (हिंदी टंकण/आशुलिपि ग्रहण प्रशिक्षण केंद्र) राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, मुख्य पोस्ट-, मास्टर जनरल का कार्यालय, पी-36, योगायोग, भवन, 13वां तल कोलकाता- 700 0012.
2.	हिंदी टाइपलेखन	40 कार्यदिवस	10-3-2003 से 9-5-2003 तक	
3.	हिंदी टाइपलेखन	40 कार्यदिवस	26-5-2003 से 18-7-2003 तक	
4.	हिंदी आशुलिपि	80 कार्यदिवस	18-8-2003 से 10-12-2003 तक	

नोट : उल्लेखनीय है कि केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप संस्थान के 1, कोंसिल हाउस स्ट्रीट, कोलकाता-700 001 केन्द्र पर कंप्यूटर पर हिंदी टंकण एवं आशुलिपि का प्रशिक्षण जल्द ही प्रारंभ हो जाने की संभावना है।

3. इन प्रशिक्षण पाठयक्रमों में निम्नांकित कर्मचारी नामित किए जा सकते हैं—

(क) प्रोबेशनर।

(ख) उन स्थानों के कर्मचारी जहां हिंदी टंकण या आशुलिपि का कोई प्रशिक्षण केंद्र नहीं है।

(ग) शिफ्ट डयूटी पर काम करने वाले कर्मचारी।

(घ) अन्य कर्मचारी जिनके लिए कार्यालय यह समझते हैं कि उनको पूर्णकालिक प्रशिक्षण देना लाभदायक होगा।

4. ये पाठ्यक्रम पूर्णकालिक हैं और प्रशिक्षण के लिए कोई शुल्क नहीं लिया जाता। इन पाठ्यक्रमों की विषय वस्तु वही है जो हिंदी शिक्षण योजना के अन्तर्गत निर्धारित हैं। प्रशिक्षण की अवधि में प्रशिक्षार्थी प्रात: 9-30 से सायं 6-00 बजे तक प्रशिक्षण केंद्र पर प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। पाठ्यक्रम के अंत में प्रशिक्षार्थियों की परीक्षा हिंदी शिक्षण योजना के परीक्षा स्कंध द्वारा ली जाती है। सफल प्रशिक्षार्थियों को प्रमाण-पत्र दिये जाते हैं। केन्द्र सरकार के ऐसे कर्मचारी जो अधिक अंक प्राप्त करते हैं (टाइपलेखन में 90 प्रतिशत या अधिक और आशुलिपि में 88 प्रतिशत या अधिक) संबंधित नियमों के अधीन विहित शर्तें पूरी करने पर अपने कार्यालयों द्वारा नकद पुरस्कार के पात्र होंगे।

5. केंद्र सरकार के निगमों/उपक्रमों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों, आदि को प्रति कर्मचारी 50 (पचास) रुपये की दर से परीक्षा शुल्क देना होता है। परीक्षा शुल्क बैंक ड्राफ्ट द्वारा दिया जायेगा जो कि उप निदेशक (परीक्षा), हिंदी शिक्षण योजना, नई दिल्ली, के नाम से देय होगा।

6. केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप संस्थान, कोलकाता में प्रशिक्षार्थियों के लिए भोजन एवं आवास की सुविधा उपलब्ध नहीं है।

7. इन पाठ्यक्रमों के लिए अर्हताएं निम्न प्रकार हैं—

(क) **हिंदी टाइपलेखन**

1. सभी अवर श्रेणी लिपिकों एवं अंग्रेजी टंककों के लिए यह प्रशिक्षण अनिवार्य है।
2. यू.डी.सी. हिंदी सहायकों एवं हिंदी अनुवादकों को भी स्वैच्छिक आधार पर नामित किया जा सकता है।

3. **शैक्षणिक योग्यता**—हिंदी के साथ मैट्रिक या उसके समकक्ष अन्य परीक्षा जैसे प्राज्ञ आदि उत्तीर्ण हों। दिनांक 27-10-1980 के राजभाषा विभाग के कार्यालय ज्ञापन सं. 14016/17/88-रा.भा. (घ) के अनुसार हिंदी टंकण के प्रशिक्षण के लिए उन सभी कर्मचारियों को जिनकी शैक्षणिक योग्यता हिंदी के साथ मिडिल अथवा समकक्ष परीक्षा जैसे प्रवीण आदि उत्तीर्ण हों, को भी प्रवेश दिया जा सकेगा।

(ख) **हिंदी आशुलिपि**

1. सभी वर्ग के आशुलिपिकों, पी.ए., सीनियर पी.ए. के लिए यह प्रशिक्षण अनिवार्य है।

2. कक्षाओं में स्थान उपलब्ध होने पर ऐसे अवर श्रेणी लिपिकों/टाइपिस्टों, जो हिंदी शिक्षण योजना की हिंदी टाइप परीक्षा उत्तीर्ण हों तथा संबंधित कार्यालय यह प्रमाण-पत्र दें कि उनका यह प्रशिक्षण जनहित में हैं, को भी प्रवेश दिया जा सकता है।

3. **शैक्षणिक योग्यता**—हिंदी के साथ मैट्रिक या उसके समकक्ष अन्य कोई परीक्षा प्राज्ञ आदि उत्तीर्ण हों।

8. प्रशिक्षण क्षमता का पूरा लाभ उठाया जा सके इसलिए केवल उन्हीं कर्मचारियों को नामित किया जाये, जिन्हें निश्चित रूप से प्रशिक्षण के लिए कार्यमुक्त किया जा सके। प्रशिक्षण के दौरान कर्मचारियों को लम्बी अवधि का अवकाश स्वीकृत करना संभव नहीं होगा। सत्र के दौरान किसी कर्मचारी को ऐसा स्थानान्तरण न किया जाए जिससे उसके प्रशिक्षण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े। पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने के बाद किसी भी कर्मचारी को सत्र के मध्य से वापस बुलाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

9. आपसे अनुरोध है कि अपने प्रतिभागियों के नाम पाठ्यक्रम आरम्भ होने से कम से कम 15 दिन पहले केन्द्र के सहायक निदेशक को भिजवा दें। पाठ्यक्रमों के लिए नामित कर्मचारियों को प्रशिक्षण आरम्भ होने के दिन प्रशिक्षण केन्द्र पर प्रात: 9.30 बजे उपस्थित होने के निर्देश भी दे दें परन्तु यदि किसी अवर श्रेणी लिपिक को आशुलिपि पाठ्यक्रम के लिए नामित किया जाता है तो उनके प्रवेश की पुष्टि प्राप्त होने पर ही उन्हें प्रशिक्षण के लिए भेजा जाये।

10. पाठ्यक्रम में प्रवेश **प्रथम आओ प्रथम पाओ** के आधार पर दिया जायेगा।

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो
राजभाषा विभाग : गृह मंत्रालय, नई दिल्ली

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो (राजभाषा विभाग) द्वारा वर्ष 2003-2004 में आयोजित किए जाने वाले अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों का कैलेंडर

क्र. सं.	पाठ्यक्रम का नाम	अवधि और प्रशिक्षणार्थियों की संख्या	प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारंभ होने की तारीख	परीक्षा की तारीख	प्रशिक्षण केंद्र
1.	त्रैमासिक अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम	3 माह 360 प्रशिक्षार्थी प्रतिवर्ष	1 अप्रैल से 30 जून, 2003 1 जुलाई से 30 सितंबर, 2003 1 अक्तूबर से 31 दिसंबर, 2003 1 जनवरी से 31 मार्च, 2004	सत्र की समाप्ति पर	1. नई दिल्ली 2. बेंगलूर 3. कोलकाता 4. मुंबई
2.	21 दिवसीय विशेष अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम	21 कार्यदिवस 30 प्रशिक्षार्थी प्रतिवर्ष	अप्रैल, 2003 से सितंबर, 2003 तक 1 कार्यक्रम अक्तूबर, 2003 से मार्च, 2004 तक 1 कार्यक्रम	पाठ्यक्रम की समाप्ति पर	किसी भी कार्यालय/ नगर में, जहां से मांग प्राप्त होती है।
3.	5 दिवसीय संक्षिप्त अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम	5 कार्यदिवस 400 प्रशिक्षार्थी प्रतिवर्ष	अप्रैल से जून, 2003 तक 4 कार्यक्रम जुलाई से सितंबर, 2003 तक 4 कार्यक्रम अक्तूबर से दिसंबर, 2003 तक 4 कार्यक्रम जनवरी, 2004 से मार्च, 2004 तक 4 कार्यक्रम	कोई परीक्षा नहीं	किसी भी कार्यालय/ नगर में, जहां से मांग प्राप्त होती है।
4.	उच्चस्तरीय/पुनश्चर्या प्रशिक्षण पाठ्यक्रम	5 कार्यदिवस 90 प्रशिक्षार्थी प्रतिवर्ष	21-4-2003 से 25-4-2003 16-6-2003 से 20-6-2003 25-8-2003 से 29-8-2003 6-10-2003 से 10-10-2003 8-12-2003 से 12-12-2003 9-2-2004 से 13-2-2004	कोई परीक्षा नहीं	नई दिल्ली (मुख्यालय)

टिप्पणी :

1. त्रैमासिक अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में हिंदी अनुवादकों के अतिरिक्त वे कर्मचारी भी प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं, जो अनुवाद कार्य या राजभाषा नीति के कार्यान्वयन से जुड़ें हों और जिन्हें हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा का स्नातक स्तर का ज्ञान हो।

2. 21 दिवसीय विशेष अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम और 5 कार्यदिवसीय संक्षिप्त अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का आयोजन अलग-अलग कार्यालयों की मांग पर उन्हीं के कार्यालयों में प्रशिक्षणार्थियों की उपलब्धता और कार्यालयों की सुविधा के अनुसार विभिन्न नगरों में किया जाता है।

3. संक्षिप्त अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम और 21 दिवसीय विशेष अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में अनुवाद कार्य अथवा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन से जुड़े हुए अधिकारी/कर्मचारी भाग ले सकते हैं,बशर्ते कि उन्होंने स्नातक तक हिंदी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाएं पढ़ी हों।

4. उच्चस्तरीय/पुनश्चर्या अनुवाद प्रशिक्षण अनुवादकों/हिंदी अधिकारियों/राजभाषा अधिकारियों तथा उनसे ऊपर के अधिकारियों के लिए आयोजित किए जाते हैं।

5. छात्रावास की व्यवस्था केवल नई दिल्ली और कोलकाता में हैं, जिसके लिए प्रतिमास 220 रु. सेवा प्रभार देय होते हैं। भोजन व्यय प्रशिक्षार्थी स्वयं वहन करते हैं तथा अन्य आधारभूत सुविधाएं ब्यूरो उपलब्ध कराता है।

6. समस्त प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के अंतर्गत दिया जाने वाला प्रशिक्षण नि.शुल्क है। अत: शिक्षा शुल्क अथवा परीक्षा शुल्क के रूप में कोई शुल्क नहीं लिया जाता।

7. संपर्क सूत्र :

उत्तरी क्षेत्र	केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, 8वां तल, बी-ब्लॉक, पर्यावरण भवन, सी.जी.ओ. काम्पलैक्स लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 दूरभाष : 24362025, 24362151, 24362988	केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो छात्रावास, क्वार्टर सं. 876 से 890 सेक्टर-7, पुष्प विहार, नई दिल्ली-110017 दूरभाष : 26862873
दक्षिणी क्षेत्र	अनुवाद प्रशिक्षण केंद्र, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, 5वां तल, केंद्रीय सदन, डी ब्लॉक, 17वां मेन, दूसरा ब्लॉक, कोरमंगला बेंगलूर-560031 दूरभाषा : 5537952, 5531946	छात्रावास उपलब्ध नहीं है।
पूर्वी और पूर्वोत्तर क्षेत्र	अनुवाद प्रशिक्षण केंद्र, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, 67-बी, बालीगंज सर्कुलर रोड, कोलकाता-700019 दूरभाष : 22476799, 22406043	केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो छात्रावास, 67-बी, बालीगंज सर्कुलर रोड, कोलकाता-700019 दूरभाष : 22476799, 22406043
पश्चिमी क्षेत्र	अनुवाद प्रशिक्षण केंद्र, कामर्स हाउस, तीसरा माला, बेलार्ड एस्टेट, करीमभाई रोड, मुंबई-400038 दूरभाष : 22611823, 22619478	छात्रावास उपलब्ध नहीं है।

राजभाषा विभाग

वर्ष 2000-01 के लिए इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कारों तथा राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तक लेखन पुरस्कारों की घोषणा।

राजभाषा विभाग के दिनांक 20 जनवरी, 2003 के नोट सं. 12001/2/2001 राभा. (का.2) के अनुसार

वर्ष 2000-01 के लिए इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कारों तथा राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तक लेखन पुरस्कारों पर विभाग द्वारा निर्णय लिया जा चुका है। इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कारों के संबंध में विभाग द्वारा जारी किए गए प्रेस नोट की प्रति संलग्न है। राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तक लेखन के संबंध में पुरस्कार निम्नानुसार हैं :—

	पुस्तक का नाम	पुरस्कार	लेखक	पुरस्कार राशि
1.	आधुनिक औषध विज्ञान-एक पाठ्य पुस्तक	द्वितीय	डॉ. बिरेन्द्र प्रसाद,	75,000 रुपये
2.	परिचयात्मक पर्यावरण जैविकी एवं वानिकी	तृतीय	श्री वी.एस. सक्सैना, डॉ. हरिश्चन्द्र भारतीय, डॉ. अरविन्द भाटिया,	50,000 रुपये
3.	हम और हमारा पर्यावरण	सांत्वना	डॉ. रविशंकर पाण्डेय,	10,000 रुपये
4.	नाभिकीय ऊर्जा	सांत्वना	डॉ. डी.डी. ओझा,	10,000 रुपये
5.	प्राणि-कार्यिकी	सांत्वना	डॉ. अरविन्द भाटिया, डॉ. कुलवन्त सिंह कोहली,	10,000 रुपये
6.	विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी	सांत्वना	डॉ. के. एस. कोहली,	10,000 रुपये

संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग ने इस आशय के निदेश दिए हैं कि ऊपर विषयक पुरस्कारों के विस्तृत प्रचार हेतु इन्हें आगामी माह में प्रकाशित की जाने वाली पत्रिका राजभाषा भारती में छपवाया जाए। अनुरोध है कि उक्तानुसार संलग्न सामग्री के प्रकाशन की व्यवस्था करें।

भारत संघ की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में उत्कृष्ट उपलब्धियों के लिए इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार

नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग ने वर्ष 2000-01 के लिए इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कारों की घोषणा कर दी है। ये पुरस्कार भारत सरकार के मंत्रालयों और विभागों, राष्ट्रीयकृत बैंकों/वित्तीय संस्थानों, उपक्रमों और नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए प्रति वर्ष दिए जाते हैं। केंद्रीय सरकार के कार्मिकों को उनके कामकाज से संबंधित विषयों पर हिंदी में मौलिक पुस्तक लेखन के लिए नकद पुरस्कार भी दिए जाते हैं।

उक्त पुरस्कार प्रदान करने के लिए मंत्रालयों और विभागों को दो श्रेणियों में रखा गया है। पहली श्रेणी में, ऐसे मंत्रालय और विभाग हैं जहां कार्मिकों की संख्या 300 से अधिक है। इस श्रेणी के अंतर्गत भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक का

कार्यालय को प्रथम, खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग को द्वितीय और श्रम मंत्रालय को तृतीय पुरस्कार के लिए चुना गया है। दूसरी श्रेणी में वे मंत्रालय/विभाग हैं जिनमें कार्मिकों की संख्या 300 से कम है। इसके अंतर्गत संसदीय कार्य मंत्रालय को प्रथम, लघु उद्योग कृषि एवं ग्रामीण उद्योग विभाग को द्वितीय और उपभोक्ता मामले विभाग को तृतीय पुरस्कार के लिए चुना गया है।

देश के सभी भागों में स्थित केंद्रीय सरकार के सार्वजनिक उपक्रमों को यह पुरस्कार 'क', 'ख' तथा 'ग' क्षेत्र के लिए अलग-अलग दिए जाते हैं। 'क' क्षेत्र में बिहार, झारखण्ड, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, दिल्ली तथा अंडमान और निकोबार द्वीप-समूह शामिल हैं। 'ख' क्षेत्र में गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब राज्य और चंडीगढ़ संघ राज्य क्षेत्र शामिल हैं। 'ग' में अन्य सभी राज्य और संघ राज्य क्षेत्र शामिल हैं।

'क' क्षेत्र में स्थित उपक्रमों में प्रथम पुरस्कार के लिए टिहरी हाइड्रो डेवलपमेंट कारपोरेशन लिमिटेड, नोएडा को चुना गया है। द्वितीय पुरस्कार के लिए इंजीनियर्स इंडिया लि., नई दिल्ली को तथा तृतीय के लिए गैस अथारिटी आफ इंडिया लि., नई दिल्ली को योग्य पाया गया है।

'ख' क्षेत्र के उपक्रमों में भारतीय कपास निगम लि., मुंबई ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। द्वितीय और तृतीय स्थान के लिए क्रमशः भारतीय निर्यात ऋण गारंटी लि., मुम्बई तथा हिन्दुस्तान पैट्रोलियम कार्पोरेशन लिमिटेड, मुंबई को चुना गया है।

'ग' क्षेत्र में स्थित उपक्रमों में एन.एम.डी.सी. हैदराबाद ने प्रथम स्थान प्राप्त किया है। बेंगलूर स्थिति हिंदुस्तान एरोनाटिक्स लि, बेंगलूर द्वितीय और कोलकाता स्थित हिंदुस्तान स्टील वर्क्स कन्स्ट्रक्शन लि., कोलकाता तृतीय स्थान पर रहे।

सरकारी काम-काज में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए और उसके प्रयोग में आने वाली बाधाओं को दूर करने के तरीके निकालने के उद्देश्य से संघ सरकार ने देश के विभिन्न नगरों में स्थित कार्यालयों के लिए नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियां गठित की हैं। संघ की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में अच्छा कार्य करने वाली इन समितियों को भी इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कारों से पुरस्कृत किया जाता है। 'क' क्षेत्र से नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति लखनऊ (का.) 'ख' क्षेत्र से बड़ौदा (बैंक) तथा 'ग' क्षेत्र से तिरूवनन्तपुरम (बैंक) को पुरस्कार के लिए चुना गया है।

हिंदी में स्तरीय मौलिक पुस्तक लेखन के लिए प्रथम पुरस्कार 20,000/-रुपये, दूसरा 16,000/-रुपये और तीसरा 10,000/रुपये दिया जाता है। इस श्रेणी में प्रथम पुरस्कार के लिए श्री वी.एस. सक्सेना को उनकी पुस्तक 'पर्यावरण परिरक्षण एवं वानिकी' को चुना गया है। द्वितीय पुरस्कार के लिए डॉ. दलसिंगार यादव एवं सुब्रत दास की पुस्तक 'भुगतान प्रणाली व इलेक्ट्रानिक मीडिया' तथा तृतीय पुरस्कार के लिए डॉ. सतीश कौशिक की पुस्तक 'भेड़ पालन एवं प्रबंध' को चुना गया है।

डॉ हरिवंश राय 'बच्चन'

मदिरालय जाने को घर से
चलता है पीने वाला
किस पथ से जाऊं
असमंजस में है भोला भाला
अलग अलग पथ बतलाते सब
पर मैं यह बतलाता हूँ
राह पकड़ तू एक चला चल
पा जायेगा मधुशाला

●

मुसलमान औ हिन्दू हैं दो
एक, मगर, उनका प्याला
एक, मगर, उनका मदिरालय
एक, मगर, उनकी हाला
दोनों रहते एक न जब तक
मस्जिद-मंदिर में जाते
बैर बढ़ाते मस्जिद-मंदिर
मेल कराती मधुशाला

कभी नहीं सुन पड़ता
इसने हां छू दी मेरी हाला
कभी नहीं कोई कहता
उसने जूठा कर डाला प्याला
सभी जाति के लोग बैठकर
साथ यहीं पर पीते हैं
सौ सुधारकों का करती है
काम अकेली मधुशाला

●

स्वंय नहीं पीता, औरों को
किन्तु पिला देता हाला,
स्वयं नहीं छूता, औरों को,
पर पकड़ा देता प्याला,
पर उपदेश कुशल बहुतेरों
से मैने यह सीखा है,
स्वयं नहीं जाता, औरों को,
पहुंचा देता मधुशाला

यम आयेगा साकी बनकर
साथ लिए काली हाला
पी न होश में फिर आएगा
सुरा बिसुध यह मतवाला
यह अंतिम बेहोशी, अंतिम
साकी, अंतिम प्याला है,
पाथिक, प्यार से पीना इसको,
फिर न मिलेगी मधुशाला

डॉ शिवमंगल सिंह 'सुमन'

वरदान मांगूंगा नहीं

यह हार एक विराम है
जीवन महा-संग्राम है
तिल-तिल मिटूंगा पर दया की भीख मैं लूंगा नहीं
वरदान मांगूंगा नहीं

समृति सुखद प्रहरों के लिए
अपने खण्डहरों के लिए
यह जान लो मैं विश्व की सम्पति चाहूंगा नहीं
वरदान माँगूँगा नहीं

क्या हार में क्या जीत में
किंचित नहीं भयभीत मैं
संघर्ष पथ पर जो मिले यह भी सही वह भी सही
वरदान मांगूंगा नहीं

लघुता न अब मेरा छुओ
तुम हो महान बने रहो
अपने हृदय की वेदना मैं व्यर्थ त्यागूंगा नहीं
वरदान मांगूंगा नहीं

चाहे हृदय को ताप दो
चाहे मुझे अभिशाप दो
कुछ भी करो कर्त्तव्य-पथ से किन्तु भगूंगा नहीं
वरदान मांगूंगा नहीं

आभार

जिस जिससे पथ पर स्नेह मिला
उस उस राही को धन्यवाद
जीवन अस्थिर अनजाने ही
हो जाता पथ पर मेल कहीं
सीमित पग-डग, लम्बी मंजिल
तय कर लेना कुछ खेल नहीं
दाएँ-बाएं सुख-दुख चलते
सम्मुख चलता पथ का प्रमाद
जिस जिससे पथ पर स्नेह मिला
उस उस राही को धन्यवाद

(2)

सांसों पर अवलम्बित काया
जब चलते-चलते चूर हुई
दो स्नेह-शब्द मिल गए, मिली
नव सफूर्ति थकावट दूर हुई
पथ के पहचाने छूट गए
पर साथ-साथ चल रही याद
जिस जिसे पथ पर स्नेह मिला
उस उस राही को धन्यवाद

(3)

जो साथ न मेरा दे पाए
उनसे कब सूनी हुई डगर
मैं भी न चलूं यदि तो भी क्या
राही मर लेकिन राह अमर
इस पथ पर वे ही चलते हैं
जो चलने का पा गए स्वाद
जिस जिससे पथ पर स्नेह मिला
उस उस राही को धन्यवाद

(4)

कैसे चल पाता यदि न मिला
होता मुझको आकुल-अन्तर
कैसे चल पाता यदि मिलते
चिर-तृप्ति अमरता-पूर्ण प्रहर
आभारी हूं मैं उन सबका
दे गए व्यथा का जो प्रसाद
जिस जिससे पथ पर स्नेह मिला
उस उस राही को धन्यवाद

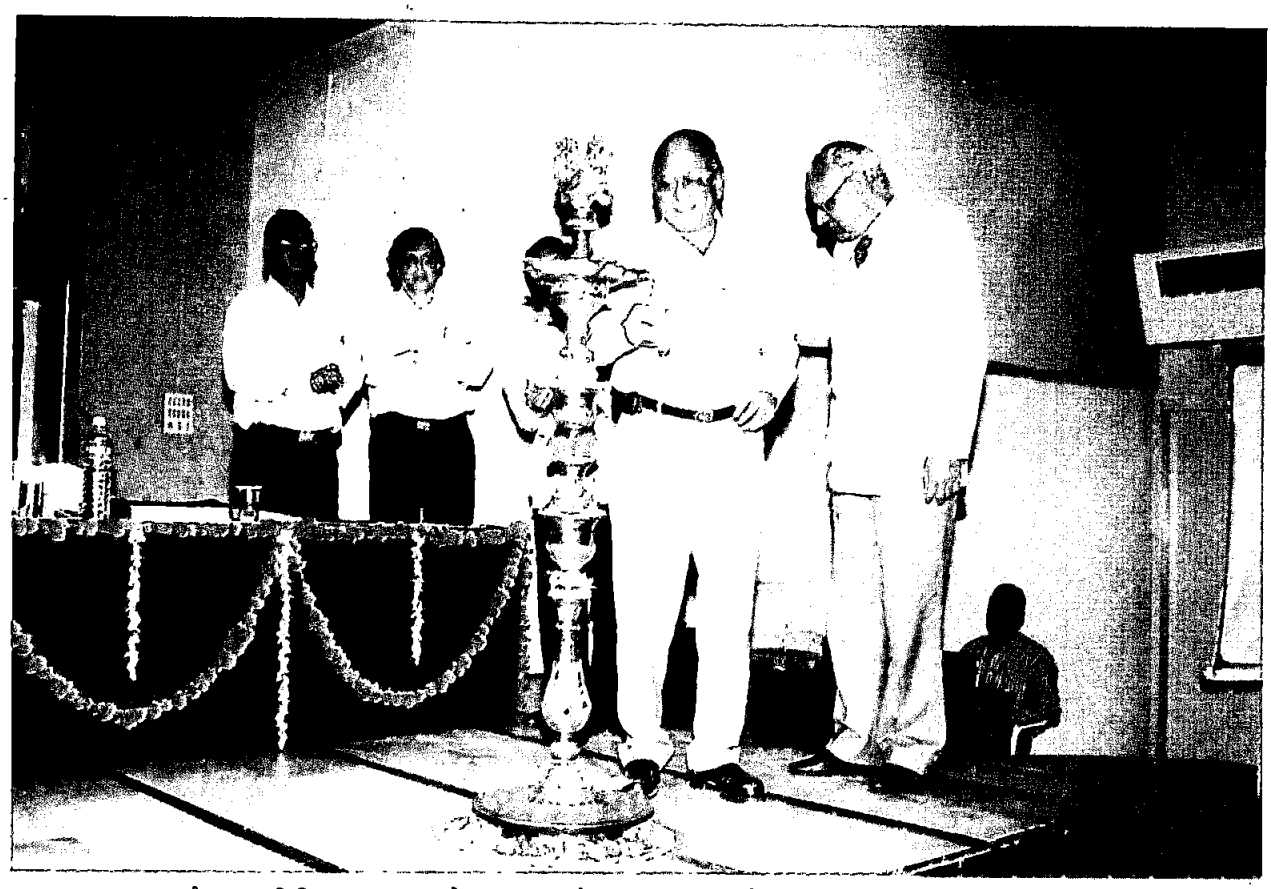

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम) वड़ोदरा द्वारा आयोजित राजभाषा सम्मेलन का दीप प्रज्ज्वलित कर उद्घाटन करते हुए गुजरात रिफाइनरी के कार्यकारी निदेशक और नराकास के अध्यक्ष श्री बी.के.मुखर्जी। उनके साथ खड़े हैं राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के संयुक्त सचिव श्री मदन लाल गुप्ता।

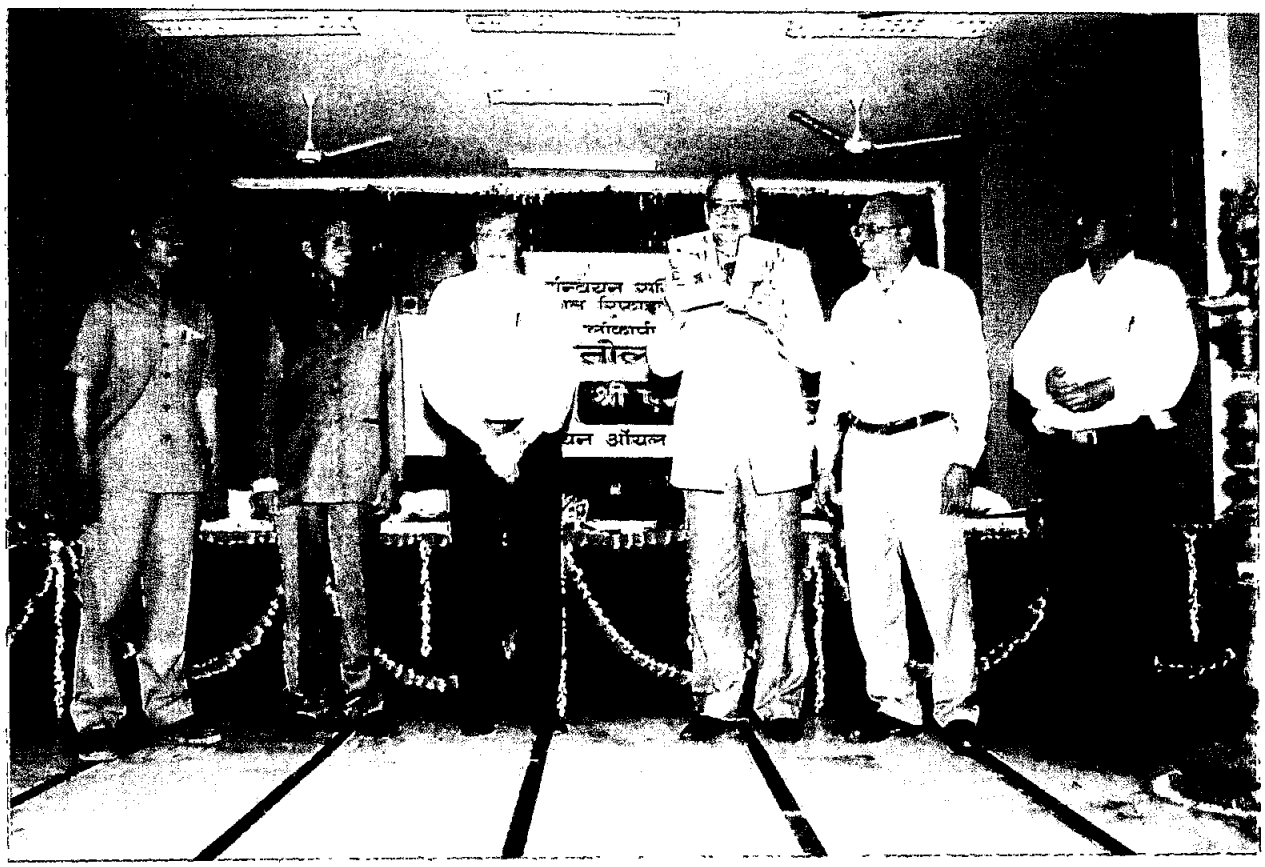

इंडियन आयल कारपोरेशन लिमिटेड, वड़ोदरा की गुजरात रिफाइनरी के प्रबंधक (प्रशासन) और नराकास (उपक्रम) वड़ोदरा के सदस्य सचिव डॉ0 माणिक मृगेश के काव्य संग्रह 'तोल-तोल के बोल' का लोकार्पण करते हुए राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) के संयुक्त सचिव श्री मदन लाल गुप्ता।

पं. सं. 3246/77
आई एस एस एन 0970-9398

भारत सरकार राजभाषा विभाग, (गृह मंत्रालय), लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003 के लिए सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा, उप सम्पादक द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय, मायापुरी, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।